अट्ठमो अंगो

अन्तगडदसाओ

(अन्तकृद्दशांग सूत्र)

(मूलपाठ, हिन्दी अनुवाद, परिशिष्टादि युक्त)

तत्वावधान

आचार्यश्री 1008 श्री रामलालजी म.सा.

प्रकाशक :

साधुमार्गी पब्लिकेशन

अन्तर्गत - श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

समता भवन, बीकानेर

❖ अन्तगडदसाओ (अन्तकृद्दशांगसूत्र)

❖ तत्वावधान : आचार्यश्री 1008 श्री रामलालजी म.सा.

❖ संस्करण : प्रथम संस्करण 2008 (2100 प्रतियाँ)
द्वितीय संस्करण 2014 (2100 प्रतियाँ)
तृतीय संस्करण 2018 (5100 प्रतियाँ)
चर्तुथ संस्करण 2019 (5000 प्रतियाँ)

❖ मूल्य : 35/-

❖ अर्थ-सहयोगी :
स्वधर्मी परिवार

❖ प्रकाशक :
साधुमार्गी पब्लिकेशन

❖ पुस्तक प्राप्ति स्थल :
श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ
समता भवन, आचार्य श्री नानेश मार्ग,
नोखा रोड, गंगाशहर, बीकानेर- 334401 (राज.)
दूरभाष : 0151-2270261, 2270359

आचार्य श्री नानेश ध्यान केन्द्र
सुन्दरवास, राणाप्रतापनगर रोड, उदयपुर (राज.)
फोन : 0294-2490717, 2490306

श्री गणेश जैन ज्ञान भण्डार
समता भवन, नौलाईपुरा, रतलाम (म.प्र.)
फोन : 07412-244443

प्रकाशकीय

साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब होता है। इस दृष्टि से अर्धमागधी आगम साहित्य जैन समाज और साहित्य का प्रतिबिम्ब माना जा सकता है। अर्धमागधी आगम साहित्य की उपादेयता सर्वोपरि है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए स्मृति शेष समता विभूति 1008 आचार्य-प्रवर श्री नानालालजी म.सा. के जीवनकाल में श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ ने आगमों के अनुवाद और प्रकाशन का महत्वपूर्ण कार्य किया था। तब आचार्य प्रवर के तत्वावधान में कई आगमों का प्रकाशन हुआ था।

वर्तमान समय में व्यसन मुक्ति प्रणेता 1008 आचार्य-प्रवर श्री रामलालजी म.सा. अपनी नैश्रायरत् साधु-साध्वियों एवं श्रावक-श्राविकाओं को ज्ञानवान् बनाने हेतु विशेष उद्‌बोधन देते हुए तद्‌नुरूप अथक प्रयास कर रहे है। अतगडदशासूत्र जो आठवां अंग आगम है तथा पर्युषणकाल में इसके वाचन की परम्परा रही है, इसमें तपस्वी साधकों के, जीवन चारित्र विशेष रूप से उनके साधना पक्ष को वर्णित किया गया है। अतः उसी क्रम में संघ ने यह महसूस किया है कि इस आगम ग्रन्थ को पुनः नये रूप से व्याख्यायित कर प्रकाशित किया जाये। हमारे लिए प्रसन्नता की बात है कि आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलालजी म.सा. के तत्वावधान में अंतगडदशासूत्र का यह कार्य सर्वथा नवीनता के साथ पूर्ण होकर संघ को प्राप्त हुआ है। इसे इसी रूप में प्रकाशित करते हुए पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया जा रहा है। आशा है जिज्ञासु पाठक इससे लाभान्वित होंगे।

संयोजक

आगम एवं प्रकाशन समिति

श्री अ.भा. साधुमार्गी जैन संघ, बीकानेर

विषयानुक्रमणिका

अन्तगडदसा सूत्र एक परिचय 1
पढमो वग्गो : प्रथम वर्ग 3
प्रथम अध्ययन : गौतम 6
2-10 अध्ययन 14
बीओ वग्गो : द्वितीय वर्ग 15
1-8 अध्ययन 15
तइओ वग्गो : तृतीय वर्ग 17
प्रथम अध्ययन : अनीयस कुमार 18
2-6 अध्ययन 21
अष्टम अध्ययन : गजसुकुमाल 22
छह अनगारों का तपश्चरण 23
पारणे के लिए द्वारिका में प्रवेश 25
तीनों सिंघाड़े क्रमशः देवकी के महल में 26
देवकी की जिज्ञासा : अनगारों का समाधान 27
देवकी का प्रभु से स्पष्टीकरण 30
पुत्र दर्शन से देवकी का हर्षातिरेक 34
देवकी द्वारा आर्त्तध्यान 36
श्रीकृष्ण के समक्ष वेदना की अभिव्यक्ति 37
श्रीकृष्ण द्वारा देवाराधना 38
श्रीकृष्ण द्वारा देवकी को आश्वासन 39
गजसुकुमाल का जन्म और वृद्धि 40

राजमार्ग पर सोमा की क्रीड़ा 41
सोमा की याचना 42
अर्हन्त अरिष्टनेमि के चरणों में गजसुकुमाल 44
देशना से गजसुकुमाल की भावविशुद्धि 44
श्रीकृष्ण की समझाइश 45
राजा से अनगार बने 46
महाकाल श्मशान में प्रतिमा स्वीकार 48
सोमिल का उपसर्ग-गजसुकुमाल मुनि की अडोलता 49
गजसुकुमाल अनगार की मुक्ति 52
श्रीकृष्ण द्वारा वृद्ध की सहायता 52
गजसुकुमाल अनगार के दर्शनाभिलाषी श्रीकृष्ण 54
अर्हन्त अरिष्टनेमि द्वारा श्रीकृष्ण को समझाइश 55
श्रीकृष्ण द्वारा पृच्छा एवं प्रभु द्वारा समाधान 56
सोमिल की मृत्यु व कृष्ण वासुदेव का रोष 59
9 वां अध्याय 61
10-13 अध्ययन 63
चउत्थो वग्गो-चतुर्थ वर्ग 64
1-10 अध्ययन 64
पंचमो वग्गो-पंचम वर्ग 67
द्वारिका नगरी के नाश के कारण 68
कृष्ण वासुदेव का अनुताप 69
कृष्ण वासुदेव को यथार्थ का निदर्शन 70
कृष्ण वासुदेव के भविष्य का कथन 71
कृष्ण द्वारा दीक्षानन्तर पीछे के सार सम्हाल की उद्घोषणा 74
महारानी पद्मावती की प्रव्रज्या एवं मुक्ति 75
2-8 अध्ययन 81

9-10 अध्ययन 82
छट्ठो वग्गो : षष्ठ वर्ग 83
1-2 अध्ययन 83
तृतीय अध्ययन : मुद्गरपाणि 85
अर्जुन एवं उसकी भार्या के साथ दुर्व्यवहार 87
अर्जुनमाली के मनोभाव और यक्षावेश का प्रभाव 90
श्रेणिक महाराज की चेतावनीपरक उद्घोषणा 91
सुदर्शन श्रमणोपासक की प्रभु दर्शनों की उत्कण्ठा 93
सुदर्शन का प्रभु वन्दन हेतु गमन 95
आध्यात्मिक शक्ति के समक्ष यक्ष की शक्ति पराजित 96
मुद्गरपाणि यक्ष का पलायन 99
सुदर्शन के साथ अर्जुन का प्रभु वन्दनार्थ गमन 100
अर्जुन माली-प्रव्रज्या के पथ पर 101
अद्भुत सहिष्णुता से अर्जुन अनगार की मुक्ति 103
4-14 अध्ययन 106
15 वां अध्ययन 109
अतिमुक्त कुमार का गौतम अनगार के प्रति आकर्षण 111
प्रभु वन्दना को उत्कण्ठित अतिमुक्त कुमार 113
अतिमुक्त कुमार का माता से दार्शनिक संवाद 114
16 वां अध्ययन 'अलक्ष' 118
सत्तमो वग्गो सातवां वर्ग 121
अट्ठमो वग्गो - आठवां वर्ग 124
सुकुमाल देह से कठोर रत्नावली तपश्चर्या 126
दैहिक दुर्बलता में आत्मिक उज्ज्वलता 132
द्वितीय अध्ययन-सुकाली 135
तृतीय अध्ययन-महाकाली 137

चतुर्थ अध्ययन-कृष्णा 141
पंचम अध्ययन-सुकृष्णा 142
अष्टअष्टमिका, नवनमिका एवं दशदशमिका प्रतिमा 145
षष्ठ अध्ययन-महाकृष्णा 149
सप्तम अध्ययन-वीरकृष्णा 153
अष्टम अध्ययन-रामकृष्णा 158
नवम अध्ययन-पितृसेनकृष्णा 162
दशम अध्ययन-महासेनकृष्णा 166
निक्षेप : उपसंहार 170

अन्तगडदसा सूत्र

एक परिचय

भगवान महावीर ने जो धर्म देशना अर्थ रूप में प्रवाहित की, उसे गणधरों ने द्वादशांगी के सूत्रात्मक रूप में गूंथा। बारह अंगों में अन्तगडदसा आठवां अंग है। इसे अन्तकृत दशा भी कहा जा सकता है, जिसका तात्पर्य है अन्त कर्मों का अन्तकृत करने वालों का दशा-वर्णन करने वाला। इस शास्त्र में चरम शरीरी अर्थात् उसी भव में मुक्ति प्राप्त करने वाली 90 महान आत्माओं का वर्णन किया गया है। इसमें कुल आठ वर्ग हैं।

प्रथम वर्ग में गौतम कुमार आदि दस राजकुमारों की संयमपूर्वक मुक्ति का वर्णन है।

द्वितीय वर्ग में अक्षोभ कुमार आदि आठ राजकुमारों की प्रव्रज्या स्वीकारने एवं मोक्ष प्राप्त करने का उल्लेख है।

तृतीय वर्ग में अनीयस कुमार आदि तेरह राजकुमारों का वर्णन है तथा गजसुकुमाल के प्रसंग का विस्तारपूर्वक वर्णन है।

चतुर्थ वर्ग में जालिकुमार आदि दस राजकुमारों की मुक्ति का वर्णन है।

पंचम वर्ग में पद्मावती आदि दस महारानियों के चारित्र ग्रहण पूर्वक मोक्ष गमन का उल्लेख है।

षष्ठ वर्ग में मंकाई गाथापति आदि सोलह उत्तम आत्माओं का वर्णन किया गया है। इसी वर्ग में सुदर्शन श्रमणोपासक एवं अर्जुन माली का वर्णन भी मिलता है।

सप्तम वर्ग में नन्दा आदि तेरह महारानियों की दीक्षा एवं सिद्धिगमन का उल्लेख किया गया है।

अष्टम वर्ग में काली आदि दस महारानियों की दीक्षा एवं कठोर तपाराधना पूर्वक मोक्ष जाने का वर्णन है।

इस प्रकार यह अन्तगडसूत्र आत्म साधकों को कर्मक्षय की दिशा में महान प्रेरणा देने वाला है। इस सूत्र का वाचन पर्युषण पर्व के आठ दिनों में करने की परम्परा है, ताकि अधिकाधिक लोग इस सूत्र के ज्ञान से लाभान्वित होकर सांसारिक मोह में न उलझते हुए संयम ग्रहण करके आत्मकल्याण का पथ प्रशस्त कर सकें।

* * *

णमो सिद्धाणं

अन्तगडदसाओ सूत्र

पढमो वग्गो : प्रथम वर्ग

1. तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा णामं णयरी होत्था। पुण्णभद्दे चेइए-वण्णओ। तीसे णं चंपाए णयरीए कोणिए णामं राया होत्था। महया हिमवंत वण्णओ। तेणं कालेणं तेणं समएणं अज्ज सुहम्मे थेरे जाव पंचहिं, अणगार सएहिं सिद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे जाव समोसरिए। परिसा णिग्गया जाव पडिगया। तेणं कालेणं तेणं समएणं अज्जसुहम्मस्स अंतेवासी अज्ज जंबू जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी-

उस काल उस समय में अर्थात् वर्तमान अवसर्पिणी काल के चौथे आरे में चंपा नामक नगरी थी। उसके बाहर उत्तर पूर्व दिशा भाग में पूर्णभद्र नामक चैत्य-व्यन्तरायतन उद्यान था। उस चम्पा नगरी में कोणिक नामक राजा राज्य करता था। वह महाहिमवान् पर्वत के समान महान था। (नगरी, व्यन्तरायतन एवं राजा का विस्तृत वर्णन औपपातिक सूत्र से जान लेना चाहिए) उस काल उस समय में जाति संपन्न, कुल संपन्न आदि अनेक गुणों से सम्पन्न आर्य सुधर्मा नाम के आचार्य पाँच सौ अनगारों से युक्त होकर क्रमशः विचरण करते हुए, एक गाँव से दूसरे गाँव, इस प्रकार ग्रामानुग्राम गमन करते हुए चम्पा नगरी में पधारे। जन समुदाय उनके दर्शन, वन्दन, पर्युपासना के लिए निकला। आर्य सुधर्मा स्वामी ने धर्मोपदेश दिया।

जनता ने उपदेश सुना और परिषद् पुनः लौट गई। उस काल उस समय में आर्य सुधर्मा स्वामी के अन्तेवासी-शिष्य जाति सम्पन्न आदि अनेक गुणों से युक्त आर्य जम्बू स्वामी ने हाथ जोड़कर विनयपूर्वक पर्युपासना करते हुए इस प्रकार कहा -

2. **'जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं आइगरेणं जाव संपत्तेणं सत्तमस्स अंगस्स उवासगदसाणं अयमट्ठे पण्णत्ते, अट्ठमस्स णं भंते! अंगस्स अंतगडदसाणं समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते?''**

'एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं अट्ठ वग्गा पण्णत्ता।'

भगवन्! यदि धर्म की आदि करने वाले यावत् सिद्धगति को प्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने सातवें अंग उपासकदशा का यह अर्थ फरमाया था (जो मैंने आपश्री के मुखारविन्द से श्रवण किया) तो भगवन्! सिद्धि को प्राप्त कर चुके श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा का क्या अर्थ फरमाया था?

आर्य सुधर्मा फरमाने लगे- ''जम्बू! मुक्ति को प्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के आठ वर्ग बतलाए थे।''

3. **जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं अट्ठ वग्गा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते! वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं कइ अज्झयणा पण्णत्ता?**

एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं

अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं पढमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता तं जहा -

गाहाः-

'गोयम, समुद्द, सागर-गंभीर चेव होइ थिमिए य।
अयले कंपिल्ले खलु अक्खोभ-पसेणइ-विण्हू।।'

आर्य! जम्बू ने पुनः प्रतिप्रश्न किया - ''भगवन्! यदि सिद्धि को प्राप्त कर चुके श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के आठ वर्ग प्ररूपित किए तो भगवन्! अंतगडदशा के प्रथम वर्ग के श्रमण भगवान् महावीर ने कितने अध्ययन फरमाए?''

जम्बू! सिद्धगति को प्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के प्रथम वर्ग के दस अध्ययन फरमाए। वे इस प्रकार हैं-

(1) गौतम (2) समुद्र (3) सागर (4) गंभीर (5) स्तिमित (6) अचल (7) काम्पिल्य (8) अक्षोभ (9) प्रसेनजित और (10) विष्णु।

* * *

प्रथम अध्ययन : गौतम

उत्थानिका

4. **'जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं पढमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते! अज्झयणस्स अंतगडदसाणं समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते?'**

''भगवन्! यदि श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के प्रथम वर्ग के दस अध्ययन फरमाए थे, तो भगवन्! श्रमण भगवान् महावीर ने अंतगडदशा के प्रथम वर्ग के प्रथम अध्ययन का क्या अर्थ फरमाया था?'',

द्वारिका वर्णन

5. **'एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवई णामं णयरी होत्था दुवालसजोयणायामा णवजोयण-वित्थिण्णा, धणवईमई-णिम्माया, चामीकर-पागारा नाणामणि-पंचवण्ण कविसीसगपरिमंडिया, सुरम्मा अलकापुरि-संकासा, पमुदियपक्कीलिया पच्चक्खं देवलोगभूया पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरुवा।**

तीसे णं बारवईए णयरीए बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए एत्थ णं रेवयए णामं पव्वए होत्था। वण्णओ। तत्थणं रेवयए पव्वए णंदणवणेणामं उज्जाणे होत्था। वण्णओ। सुरप्पिए णामं जक्खायतणे होत्था, पोराणे, से णं एगेणं वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, असोगवरपायवे''।

जम्बू! वह इस प्रकार है- उस काल उस समय में द्वारिका

नामक नगरी थी। वह बारह योजन लम्बी, नौ योजन चौड़ी, धनपति कुबेर की बुद्धि से बनाई गई, सोने के परकोटे वाली, अनेक मणियों से जड़ित काले, नीले, लाल, पीले एवं सफेद रंग वाले कंगूरों से शोभायमान, अत्यन्त रमणीय, देवों की नगरी अलकापुरी के समान, प्रमोद एवं क्रीड़ा की भूमि, साक्षात् देवलोक के समान मालूम पड़ती हुई, प्रसन्नता उत्पन्न करने वाली, दर्शनीय, अभिरम्य यानी आगे से एवं भीतर से तथा प्रतिरम्य यानी पीछे से एवं बाहर से सुन्दर थी।

उस द्वारिका नगरी के बाहर उत्तर पूर्व दिशा की ओर एक रैवतक नामक पर्वत था। उस रैवतक पर्वत पर नंदनवन नामक उद्यान था। वहाँ सुरप्रिय नामक यक्ष का बहुत पुराना यक्षायतन था। वह यक्षायतन चारों ओर से एक वनखण्ड से घिरा हुआ था। उसमें एक श्रेष्ठ अशोक वृक्ष था। (पर्वत, उद्यान, यक्षायतन एवं वनखण्ड का वर्णन औपपातिक सूत्र से जान लेना चाहिए)

6. तत्थ णं बारवईए णयरीए कण्हे णामं वासुदेवे राया परिवसइ। महया वण्णओ।

से णं तत्थ समुद्दविजय पामोक्खाणं दसण्हं दसाराणं बलदेव पामोक्खाणं पंचण्हं महावीराणं, पज्जुण्ण पामोक्खाणं अध्दुट्ठाणं कुमारकोडीणं संबपामोक्खाणं सट्ठीए दुद्दंतसाहस्सीणं महासेणपामोक्खाणं छप्पण्णाए बलवग्गसाहस्सीणं वीरसेणपामोक्खाणं एगवीसाए वीरसाहस्सीणं, उग्गसेण-पामोक्खाणं सोलसण्हं रायसाहस्सीणं, रुप्पिणीपामोक्खाणं सोलसण्हं देवी साहस्सीणं अणंगसेणापामोक्खाणं अणेगाणं गणियासाहस्सीणं अण्णेसिं च बहूणं, ईसर जाव सत्थवाहाणं बारवईए णयरीए अद्धभरहस्स य समंतस्स आहेवच्चं जाव विहरइ।

उस द्वारिका नगरी में कृष्ण नामक वासुदेव राजा राज्य करते थे। वे महान् हिमवान् पर्वत के समान थे आदि आगमवर्णित, राजगुणों से सम्पन्न थे।

वे कृष्ण वासुदेव वहाँ समुद्रविजय प्रमुख दस दशाहों (पुण्यजनों) बलदेव प्रमुख पांच महावीरों, प्रद्युम्न प्रमुख साढ़े तीन करोड़ राजकुमारों, शाम्ब प्रमुख साठ हजार दुर्दान्त योद्धाओं, महासेन प्रमुख छप्पन हजार सैनिकों, वीरसेन प्रमुख इक्कीस हजार वीरों, उग्रसेन प्रमुख सोलह हजार राजाओं, रुक्मिणी प्रमुख सोलह हजार रानियों, अनंगसेना प्रमुख हजारों गणिकाओं और अन्य अनेक वैभवशाली तलवर, मांडलिक, कौटुम्बिक, सेठ, सेनापति, सार्थवाहों पर, द्वारिकानगरी पर और सम्पूर्ण अर्द्ध भरत पर आधिपत्य करते हुए चल रहे थे।

7. तत्थ णं बारवईए णयरीए अंधगवण्ही णामं राया परिवसइ। महया हिमवंत वण्णओ।

तस्स णं अंधगवण्हिस्स रण्णो धारिणी णामं देवी होत्था वण्णओ।

तए णं सा धारिणी देवी अण्णया कयाइं तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि एवं जहा महब्बले।

सुणिदंसण कहणा, जम्मं बालत्तणं कलाओ य।

जोव्वण-पाणिग्गहणं कण्णा वासा य भोग्या य।।

णवरं गोयमो णामेणं अट्ठण्हं रायवरकण्णाणं एगदिवसेणं पाणिं गेण्हावेंति अट्ठट्ठाओ[1] दाओ।

1. कोई-कोई यहां पर **अट्ठट्ठओ दाओ** का अर्थ दहेज के रुप में कर बैठते है। किन्तु यह अर्थ आगम संगत नहीं है। भगवती सूत्र श. 11उ.11 में आगत महाबल के वर्णन को देखने से

उस द्वारिका नगरी में महामहिमवान् पर्वत के समान महान् अंधकवृष्णि नामक राजा निवास कर रहे थे।

उस अंधकवृष्णि राजा की धारिणी नामक महारानी थी।

तदनन्तर धारिणी महारानी अन्य किसी समय उस सुकोमल शय्या पर अर्द्धनिद्रित अवस्था में सोई हुई एक उत्तम सिंह का स्वप्न देखती है।

इस प्रकार स्वप्न को देखना, महाराज को स्वप्न कहना, बालक का जन्म, बाल्यावस्था, कलाएं सीखना, यौवन, पाणिग्रहण, स्त्रियों के भवनों का निर्माण, स्त्रियों के साथ कामभोग आदि सारा वर्णन भगवती सूत्र शतक 11 उद्देशक 11 में कहे गए महाबल चारित्र के वर्णन के अनुसार जान लेना चाहिए।

विशेष बात यह है कि बालक का नाम महाबल के स्थान पर गौतम रखा गया। यथासमय एक दिन में ही आठ राजकन्याओं के साथ विवाह कर दिया गया। महाराज अंधकवृष्णि ने गौतम कुमार को आठ करोड़ स्वर्ण मोहरें इत्यादि अनेक वस्तुएं आठ की संख्या में दीं

यह स्पष्ट है कि वर के माता-पिता वर को आठ-आठ की संख्या में अनेक पदार्थ देते हैं जिन्हें वर अपनी आठ पत्नियों को समान रुप में विभाग कर देत है। अन्यत्र आगम पाठों में जहाँ पचास कन्याओं का विवाह होता है, वहाँ वर के माता-पिता पचास-पचास की संख्या में अनेक पदार्थ देते है। यानि जहां-जहाँ जितनी कन्याओं से विवाह का प्रसंग बना है, वहाँ-वहाँ उतनी-उतनी संख्या में वर के माता-पिता अनेक वस्तुएं देते हैं। जिन्हें वर अपनी स्त्रियों में समान भाग से वितरित करता है। अतः वर्तमान में प्रचलित दहेज प्रथा जिसमें वधू पक्ष द्वारा वर पक्ष को दि जाता है, भिन्न है एवं आगमकालिक प्रतिदीन की परम्परा भिन्न रु में रही है।

उपासकदशांग सूत्र के आठवें अध्ययन का पाठ अपवाद रुप में मिलता है। जिसमें लिखा गया है कि महाशतक की पत्नियां अपने घर से धन लाई थी।

एवं गौतम कुमार ने उन सभी वस्तुओं को अपनी आठों स्त्रियों में विभक्त कर दिया। (आठ की संख्या में दी जाने वाली वस्तुओं का नाम भगवती सूत्र में महाबल चारित्र में देखें।)

8. **तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठनेमी आइगरे जाव संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। चउव्विहा देवा आगया। कण्हे वि णिग्गए। तए णं तस्स गोयमस्स कुमारस्स जहा मेहे तहा णिग्गए। धम्मं सोच्चा जं णवरं देवाणुप्पिया! अम्मापियरो आपुच्छामि! देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वयामि एवं जहा मेहे जाव इणमेव णिग्गंथं पावयणं पुरे काउं विहरइ।**

उस काल उस समय में धर्म की आदि करने वाले तीर्थंकर भगवान् अरिष्टनेमि संयम तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरण कर रहे थे। चारों जाति के देवों का आगमन हुआ। कृष्ण वासुदेव भी भगवान के दर्शन हेतु निकले। उसके पश्चात् ज्ञाताधर्मकथांग सूत्र में वर्णित मेघकुमार के समान गौतम कुमार भी प्रभु के दर्शन करने के लिए निकले। भगवान के धर्मोपदेश को सुनकर प्रसन्न हुए और निवेदन किया - देवानुप्रिय! माता पिता से अनुमति लाता हूँ। फिर देवानुप्रिय (तीर्थंकर भगवान् अरिष्टनेमि) के समीप मुंडित होकर आगार धर्म यानी गृहस्थ धर्म को छोड़कर अनगार धर्म को स्वीकार करूंगा। मेघकुमार की तरह ही गौतम कुमार ने भी चर्चापूर्वक माता-पिता की अनुमति प्राप्त करके भगवान के चरणों में दीक्षा अंगीकार की एवं निर्ग्रन्थ प्रवचन को सन्मुख रखते हुए संयम की साधना पूर्वक विचरण करने लगे।

9. **तए णं से गोयमा अण्णया कयाइं, अरहओ अरिट्ठणेमिस्स**

तहारुवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं[2] एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ अहिज्जित्ता बहूहिं चउत्थ[3] जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। तए णं

2. यद्यपि ग्यारह अंगों में प्रथम अंग आचारांग है, तथापि यहां '**आयारमाइयाइं**' ऐसा पाठ न देकर '**सामाइयमाइयाइं**' यह पाठ दिया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि सबसे पहले आवश्यक सामायिक आवश्यक है। '**सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाई**' का तात्पर्य है सामायिक आवश्यक से प्रारम्भ करके उत्तरोत्तर आगे बढते हुए ग्यारह अंगों को अध्ययन करने लगा।
3. चतुर्थ भक्त का शब्दार्थ है- 'ऐसा तप जिसमें चौथा भक्त ग्रहण किया जा सकता है।' भक्त का तात्पर्य है- भोजन। आगमकारों ने एक अहोरत्र में दो भक्तों का निरुपण किया है (1) दिवस भक्त एवं (2) रात्रि भक्त। दशवैकालिक सूत्र के छठे अध्ययन की तेईसवीं (23वीं) गाथा में '**एगभत्तं च भोयण**' कहकर मुनियों को एक सूत्र के अनेक अध्ययनों में तथा अन्य भी अनेक आगमों में संलेखना के प्रसंग पर यह पाठ मिलता है '**मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसिता सट्ठिं भत्ताई अणसणाए छेइत्ता**' इस पाठ से यह ज्ञात होता है कि एक मास यानि तीस दिनों में साठ भक्त होते हैं। इन आगमिक उद्धरणों से यह स्पष्ट है कि एक अहरोत्र में दो भक्त होते हैं- (1) दिवस भक्त (2) रात्रिभक्त।

चतुर्थ भक्त का तात्पर्य उपवास से है। यह चतुर्थ भक्त पद के अर्थ से प्रकट होता है। व्याकरणा की दृष्टि से चतुर्थ भक्त बहुब्रीहि समास युक्त पद है। इस समासयुक्त पद का विग्रह होता है- '**चतुर्थ भक्तं यत्र (तपसि) तत् चतुर्थभक्तम्**' । यानि जिस तप में चौथा भक्त स्वीकार किया जा सके, वह चतुर्थ भक्त नामक तप है। व्यवहार के धरातल पर देखा जाए तो किसी को चतुर्दशी को उपवास करना है तो वह त्रयोदशी (तेरस) को रात्रि के भक्त (भोजन) का त्याग करें, चतुर्दशी के दिवस का भक्त त्यागे, चतुर्दशी की रात्रि का भक्त त्यागे, इस प्रकार तीन भक्तों का त्याग करें एवं पूर्णिमा की सूर्योदय के पश्चात दिवस भक्त यानि चौथा भक्त ग्रहणा करके पारणा कर सकता है। चतुर्थ भक्त के इस आगमाधारित अर्थ के अनुसार उपवास के पूर्व की रात्रि में भी सूर्यास्त के पश्चात से ही आहार ग्रहण नहीं करना चाहिए। रात्रि भोजन के सर्वथा त्यागी होने से साधु-साध्वियों के उपवास में चतुर्थभक्त सर्वथा रुप से घटित होता है। रात्रि को चतुर्विध आहार के त्यागी गृहस्थों के उपवास में भी यह स्थिति सम्यक् रुप से बन जाती है। जो गृहस्थ रात्रि को बारह बजे से पूर्व आहार पानी ग्रहण करके अगले दिन उपवास करते है, उसमें परम्परा को ही हेतुभूत माना जा सकता है। उपवास यानि चतुर्थभक्त की शास्त्रीय विधि तो पहले बताए अनुसार ही समझनी चाहिए। षष्टभक्त (बेला) अष्टभक्त (तेला), दशभक्त (चौला) आदि के विषय में भी यही समझना चाहिए कि इनमें क्रमशः पांच भक्तों का त्याग (बेले के दे दिनों के चार भक्त तथा उससे पहले

अरहा अरिट्ठणेमी अण्णया कयाइ बारवईओ णयरीओ णंदणवणाओ पडिणिक्खमई बहिया जणवयविहारं विहरइ।

तए णं से गोयमे अणगारे अण्णया कयाइं जेणेव अरहा अरिट्ठेनेमी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं[4] करेइ करेत्ता वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-

फिर वे गौतम अनगार अन्य किसी समय तीर्थंकर भगवान अरिष्टनेमि के तथारूप स्थविरों के समीप सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन करते हैं, अध्ययन करके अनेक उपवास, बेले, तेले, मासखमण आदि तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरण करते हैं। तदनन्तर अन्य किसी समय तीर्थंकर भगवान् अरिष्टनेमि द्वारिका नगरी से, नन्दनवन से निकलते हैं एवं बाहर जनपद में विहार करते हैं।

तत्पश्चात् वे गौतम अनगार अन्य किसी समय जहाँ तीर्थंकर

की रात्रि का एक भक्त) करके छठे भक्त का ग्रहण, सात भक्तों का त्याग (तेले के तीन दिनों के भक्त व एक भक्त पूर्व रात्रि का) करके आठवें भक्त का ग्रहण तथा नौ भक्तों करके दसवें भक्त का ग्रहण आदि होता है। कहीं-कहीं चउत्थभक्तं, छट्ठभक्तं न कहकर चउत्थं, छट्ठं, अट्ठमं आदि कहा गया है। वहाँ भी उपर्युक्तानुसार अर्थ समझ लेना चाहिए।

4. **'आयाहिणं पयाहिणं'** (आदक्षिण प्रदक्षिणा) का तात्पर्य है वन्दनीय (जिसे वन्दना की जा रही है) की दाहिनी ओर से प्रारम्भ होने वाली प्रदक्षिणा यानी चारों ओर घूमना। पहले गुरुजनों के दाहिनी तरफ से प्रारम्भ करके उनके चारों तरफ घूमने की परम्परा थी किन्तु आजकल अपने सिर के चारों ओर हाथ घुमाने को **'आदक्षिण प्रदक्षिणां'** माना जाता है। ऐसी स्थिति में वन्दनीय गुरुजनों के दाहिनी ओर से अपने हाथों को घुमाना उपयुक्त है। भाव यह है कि घड़ी को सामने रखने पर उसके कांटों की तरह अपने हाथों को घुमाना **'आदक्षिण प्रदक्षिणां'** समझी जानी चाहिए।

प्रभु अरिष्टनेमि थे, वहाँ आते हैं, आकर अर्हन्त अरिष्टनेमि को तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिणा करते हैं, वन्दन नमस्कार करते हैं, वन्दन नमस्कार करके इस प्रकार कहने लगे -

10. 'इच्छामि णं भंते! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए' एवं जहा खंदओ तहा बारसभिक्खुपडिमाओ फासेइ फासित्ता गुणरयणं पि तवोकम्मं तहेव फासेइ निरवसेसं। जहा खंदओ तहा चिंतेइ। तहा आपुच्छइ, तहा थेरेहिं सद्धिं सेत्तुंजं दुरुइह बारस वरिसाइं परियाए मासियाए संलेहणाए जाव सिद्धे-बुद्धे-मुत्ते परिणिव्वाए-सव्वदुक्खपहीणे।

''भगवन्! आपके द्वारा अनुज्ञात होने पर अर्थात् आपकी अनुमति प्राप्त होने पर मैं एक महीने की भिक्षुप्रतिमा को स्वीकार करके विचरण करना चाहता हूँ।'' भगवान अरिष्टनेमि ने फरमाया - ''देवानुप्रिय! जिससे सुख हो।'' इस प्रकार गौतम अनगार ने प्रभु की अनुमति मिलने पर मासिकी भिक्षु प्रतिमा की आराधना की। इसी प्रकार सम्पूर्ण बारह भिक्षु प्रतिमाओं का आराधन श्रीमद् भगवती सूत्र (शतक-2 उद्देशक-1) में वर्णित स्कन्दक अनगार की तरह किया। उसी प्रकार गुणरत्न संवत्सर नामक तप का भी आराधन किया। स्कन्दक अनगार के समान ही संथारे आदि के लिए सम्पूर्ण चिन्तन करते हैं। उसी प्रकार प्रातःकाल सूर्योदय के पश्चात् प्रभु से संथारा ग्रहण करने की अनुमति प्राप्त करते हैं तथा स्थविर अनगारों के साथ शत्रुंजय पर्वत पर आरोहण करते हैं। बारह वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन करके एक मास की संलेखना करके गौतम अनगार सिद्ध होते हैं, बुद्ध होते हैं, मुक्त होते हैं, परिनिर्वाण को प्राप्त करते हैं एवं सभी दुःखों का अन्त करते हैं।

* * *

2-10 अध्ययन

निक्षेप पद -

11- 'एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंतगडदसाणं पढमस्स वग्गस्स पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते।'

एवं जहा गोयमे तहा सेसा। वण्ही पिया, धारिणी माता, समुद्दे, सागरे, गंभीरे, थिमिए, अयले, कंपिल्ले अक्खोभे पसेणई, विण्हुए, एए, एगगमा।।

।।पढमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा सम्मत्ता।।

जम्बू! इस प्रकार सिद्ध गति को प्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के प्रथम वर्ग के प्रथम अध्ययन का यह अर्थ फरमाया है। जैसा 'गौतम' अध्ययन का अर्थ कहा गया, उसी प्रकार शेष अध्ययनों का वर्णन है। अन्धकवृष्णि पिता थे, धारिणी माता थी। समुद्र, सागर, गंभीर, स्तिमित, अचल, काम्पिल्य, अक्षोभ, प्रसेनजित एवं विष्णु ये नौ उनके पुत्र थे। पुत्रों के नाम पर अध्ययनों का नाम है। सभी अध्ययनों का वर्णन प्रथम अध्ययन के समान समझना अर्थात् ये सभी अध्ययन एक गम वाले हैं।

।। प्रथम वर्ग के दस अध्याय समाप्त।।

बीओ वग्गो : द्वितीय वर्ग

1-8 अध्ययन

उत्थानिका -

12 - जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं पढमस्स वग्गस्स अइमट्ठे पण्णत्ते, दोच्चस्स णं भंते! वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं भगवया महावीरेणं कइ अज्झयणा पण्णत्ता?

एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं दोच्चस्स वग्गस्स अट्ठ अज्झयणा पण्णत्ता।

गाहा :-

1. अक्खोभ, 2. सागर खलु, 3. समुद्द, 4. हिमवंत, 5. अचल णामे य।

6. धरणे य, 7. पूरणे वि य, 8. अभिचंदे चेव अट्ठमए।।

तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए णयरीए वण्हि पिया धारिणी माया।

'जहा पढमो वग्गा तहा सव्वे अट्ठ अज्झयणा गुणरयण तवोकम्मं। सोलसवासाइं परिआओ सेत्तंजे मासियाए संलेहणाए सिद्धी।'

एवं खलु जंबू! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स दोच्चस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते।

बीओ वग्गो सम्मत्तो

आर्य जम्बू आर्य सुधर्मा से जिज्ञासा व्यक्त करते हैं- ''भगवन्! यदि श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के प्रथम वर्ग

का यह अर्थ फरमाया था तो भगवन्! श्रमण भगवान महावीर ने अंतगडदशा के दूसरे वर्ग के कितने अध्ययन फरमाए थे?''

''जम्बू! श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के दूसरे वर्ग के आठ अध्ययन प्ररूपित किए थे।''

वे इस प्रकार हैं यथा-

(1) अक्षोभ (2) सागर (3) समुद्र (4) हिमवन्त (5) अचल (6) धरण (7) पूरण और (8) अभिचन्द्र

उस काल उस समय में द्वारिका नामक नगरी थी। वृष्णि पिता और धारिणी माता के ये आठ राजकुमार थे।

जिस प्रकार प्रथम वर्ग में वर्णन है, उसी प्रकार सभी आठ अध्ययनों का वर्णन है। आठों मुनियों ने उसी प्रकार गुणरत्न संवत्सर आदि तपः कर्म की आराधना की। सोलह वर्षों तक दीक्षा पर्याय का पालन किया। शत्रुंजय पर्वत पर एक मास की संलेखना करके सिद्धि को प्राप्त किया।

जम्बू! इस प्रकार श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग के दूसरे वर्ग का यह अर्थ फरमाया था।

।।द्वितीय वर्ग समाप्त।।

तइओ वग्गो : तृतीय वर्ग

उत्थानिका -

13- जइ णं तच्चस्स उक्खेवओ।

एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स तेरस अज्झयणा पण्णत्ता तं जहा-

1. अणीयसे, 2. अणंतसेणे, 3. अणिहय, 4. विऊ, 5. देवजसे, 6. सत्तुसेणे, 7. सारणे, 8. गए, 9. सुमुहे, 10. दुम्मुहे, 11. कूवए, 12. दारुए, 13. अणादिट्ठी।

'जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स तेरस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते! अज्झयणस्स अंतगडदसाणं के अट्ठे पण्णत्ते।'

आर्य जम्बू ने पूर्ववत् आर्य सुधर्मा से आठवें अंग अंतगडदशा के तीसरे वर्ग को जानने की जिज्ञासा प्रस्तुत की। आर्य सुधर्मा ने फरमाया-

जम्बू! श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के तीसरे वर्ग के तेरह अध्ययन फरमाए थे। वे इस प्रकार हैं -

1. अनीयस 2. अनन्तसेन 3. अनिहत 4. विद्वत कुमार 5. देवयश 6. शत्रुसेन 7. सारण 8. गज 9. सुमुख 10. दुर्मुख 11. कूपक 12. दारूक और 13. अनादृष्टि।

''भगवन्! यदि श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के तीसरे वर्ग के तेरह अध्ययन प्ररूपित किए थे, तो भगवन्! अन्तगडदशा के तीसरे वर्ग के पहले अध्ययन का क्या अर्थ फरमाया था?''

प्रथम अध्ययन : अनीयस कुमार

14. 'एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं भद्दिलपुरे णामं णयरे होत्था-वण्णओ। तस्स णं भद्दिलपुरस्स उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए सिरिवणे णामं उज्जाणे होत्था-वण्णओ। जियसत्तू राया।

तत्थ णं भद्दिलपुरे णयरे नागे णामं गाहावई होत्था। अड्ढे जाव अपरिभूए। तस्स णं नागस्स- गाहावइस्स सुलसा णामं भारिया होत्था-सुकुमाल जाव सुरुवा।

हे जम्बू! वह इस प्रकार है - उस काल उस समय में भद्दिलपुर नामक नगर था। उस भद्दिलपुर नगर के उत्तर पूर्व दिशा भाग में श्रीवन नाम का उद्यान था। उस नगर में जितशत्रु नाम के राजा निवास करते थे।

उस भद्दिलपुर नगर में नाग नामक गाथापति रहता था। वह ऋद्धि सम्पन्न यावत् अपरिभूत था यानी जनता से तिरस्कृत नहीं था। उस नाग गाथापति के सुलसा नामक भार्या थी। वह अत्यंत सुकुमाल यावत सुन्दर रूप सम्पन्न थी।

15. तस्स णं नागस्स गाहावइस्स पुत्ते सुलसाए भारियाए अत्तए अणीयसे णामं कुमारे होत्था-सुकुमाले जाव सुरुवे पंचधाइपरिक्खित्ते जहा दढपइण्णे जाव गिरिकंदरमल्लीणेव चंपगपायवे सुहंसुहेणं परिवड्ढइ।

उस नाग गाथापति का पुत्र, सुलसा भार्या का आत्मज अनीयस नामक कुमार था। वह सुकुमाल यावत् सुरूप था। दूध पिलाने वाली, स्नान कराने वाली, आभूषण पहनाने वाली, खेल खिलाने वाली एवं गोद में खिलाने वाली- इस प्रकार पांच धायमाताओं

से घिरा हुआ वह अनीयस कुमार दृढ़प्रतिज्ञ के समान पर्वत की गुफा में रहे हुए चम्पक वृक्ष के समान सुखपूर्वक बढ़ने लगा।

16. तए णं तं अणीयसं कुमारं सात्तिरेग अट्ठवास जायं अम्मापियरो कलायरियस्स उवर्णेंति जाव भोगसमत्थे जाए यावि होत्था।

तए णं तं अणीयसं कुमारं उम्मुक्कबालभावं जाणित्ता अम्मापियरो सरिसियाणं जाव बत्तीसाए इब्भवर कण्णगाणं एग दिवसेणं पाणिं गेण्हावेंति।

तए णं से नागे गाहावई अणीयस्स कुमारस्स इमं इयारुवं पीइदाणं दलयइ, तंजहा-बत्तीसं हिरण्णकोडीओ जहा महाबलस्स जाव फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ।

तत्पश्चात् अनीय कुमार के आठ वर्ष से अधिक के हो जाने पर माता-पिता उसके कलाचार्य के पास भेज देते हैं। अनीयस कुमार ने कलाचार्य से बहत्तर कलाओं का अध्ययन पूर्ण कर लिया। वे यौवन भाव को प्राप्त हुए यावत् भोगों को भोगने में समर्थ हो गए।

तब उस अनीयस कुमार को बाल भाव से मुक्त हुआ जानकर माता-पिता एक दिन में ही उसका विवाह समान रूप, वय, त्वचा आदि से सम्पन्न बत्तीस श्रेष्ठि कन्याओं के साथ कर देते हैं।

विवाह के बाद वह नाग गाथापति अनीयस कुमार को इस प्रकार का प्रीतिदान देते हैं यथा बत्तीस करोड़ सोनैया आदि जिस प्रकार महाबल कुमार के वर्णन में कहा गया है, वैसे यहां भी समझ लेना चाहिए। अनीयस कुमार अपने महल में बजते हुए मृदंग आदि वाद्यों के बीच भोगों को भोगते हुए विचरने लगा।

17. तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठनेमी, जाव समोसढे

सिरिवणे उज्जाणे। अहा जाव पडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेण तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। परिसा णिग्गया।

तए णं तस्स अणीयस्स तं महया जणसद्दं जहा गोयमे तहा अणगारे जाए णवरं-सामाइयमाइयाइं चउद्दसपुव्वाइं अहिज्जइ। बीसं वासाइं परियाओ। सेसं तहेव जाव सेत्तुंजे पव्वए मासियाए संलेहणाए सिद्धे।

एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते।

उस काल उस समय में अर्हन्त अरिष्टनेमि भगवान भद्दिलपुर नगर के बाहर श्रीवन नामक उद्यान में पधारे। मर्यादा के अनुरूप अवग्रह को ग्रहण करने यानी रुकने योग्य स्थान की याचना करके संयम तप से आत्मा को भावित करते हुए वहाँ विराजे। जनता धर्मोपदेश को श्रवण करने हेतु निकली।

तब उस अनीयस कुमार के मन में जनता के जाने से होने वाली आवाज को सुनकर विचार हुआ कि आज किस महोत्सव के कारण इतना कोलाहल है। ज्ञात हुआ कि अर्हन्त अरिष्टनेमि के श्रीवन उद्यान में पधारने से जनता उमड़ रही है तो वह भी भगवान के दर्शन, प्रवचन श्रवण हेतु निकला। भगवान की वाणी से वैराग्य उत्पन्न हुआ एवं गौतम अनगार के समान ही दीक्षा ग्रहण की। विशेष यह है कि सामायिक से लेकर चौदह पूर्वों का अध्ययन किया। बीस वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन किया तथा अन्त समय में शत्रुंजय पर्वत पर जाकर एक मास की संलेखना संथारा पूर्वक सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुए।

हे जम्बू! इस प्रकार से श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अन्तगडदशा के तीसरे वर्ग के प्रथम अध्ययन का यह अर्थ फरमाया है।

2-6 अध्ययन

18- एवं जहा अणीयसे एवं सेसा वि अणंतसेणे जाव सत्तुसेणे छ अज्झयणा एगगमा। बत्तीसाओ दाओ। वीसं वासाइं परियाओ, चउद्दस पुव्वाइं अहिज्जन्ति जाव सेत्तुंजे सिद्धा।

छट्ठमज्झयणं सम्मत्तं

जिस प्रकार अनीयस कुमार का जीवन वृत्तांत है, उसी प्रकार दूसरे अध्ययन में अनंतसेन, तीसरे अध्ययन में अनिहत, चतुर्थ अध्ययन में विद्वत् कुमार, पंचम अध्ययन में देवयश, षष्ठम अध्ययन में शत्रुसेन, इन सबका वर्णन भी जान लेना चाहिए। सब का बत्तीस-बत्तीस श्रेष्ठि राजकन्याओं के साथ विवाह हुआ। सब ने बीस वर्ष की संयम पर्याय का पालन किया, चौदह पूर्वों का अध्ययन किया यावत् शत्रुंजय पर्वत पर एक मास का संथारा करके सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुए।

।।छठां अध्ययन समाप्त।।

सप्तम अध्ययन : सारण कुमार

19- जइ णं भंते! उक्खेवओ सत्तमस्स। तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए णयरीए जहा पढमे, णवरं वसुदेवे राया। धारिणी देवी। सीहो सुमिणे। सारणे कुमारे। पण्णासाओ दाओ। चउद्दस पुव्वाइं। वीसं वासाइं परियाओ। सेसं जहा गोयमस्स जाव सेत्तुंजे सिद्धे।

सत्तममज्झयणं समत्तं

सातवें अध्ययन का उत्क्षेप जान लेना चाहिए। जम्बू! उस काल उस समय में द्वारिका नामक नगरी थी। प्रथम वर्ग के समान ही

सम्पूर्ण वर्णन जानना चाहिए। अन्तर यह है कि यहां राजा का नाम वसुदेव तथा महारानी का नाम धारिणी समझना चाहिए। धारिणी महारानी ने सिंह का स्वप्न देखा। यथासमय पुत्र जन्म हुआ। उसका नाम सारण कुमार रखा गया। बड़े हो जाने पर उसका विवाह पचास राजकन्याओं के साथ हुआ। वसुदेव राजा ने सारण कुमार को पचास करोड़ सोनैया आदि अनेक वस्तुएं पचास-पचास की संख्या में दी, जिन्हें सारण कुमार ने अपनी स्त्रियों में समान रूप से वितरित कर दी। तीर्थंकर प्रभु अरिष्टनेमि का पधारना हुआ। सारण कुमार ने प्रभु की वाणी सुनकर दीक्षा ग्रहण की। चौदह पूर्वों का अध्ययन किया। बीस वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन किया। शेष सारा वर्णन गौतम कुमार के समान जानना चाहिए। अंत में शत्रुंजय पर्वत पर संथारा करके सिद्ध, बुद्ध मुक्त हुए।

।। सातवां अध्ययन समाप्त।।

अष्टम अध्ययन : गजसुकुमाल

20- जइ णं भंते! उक्खेवओ अट्ठमस्स।

एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए णयरीए, जहा पढमे जाव अरहा अरिट्ठनेमी सामी समोसढे।

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतेवासी छ अणगारा भायरा सहोयरा होत्था। सरिसया सरिसत्तया सरिसव्वया नीलुप्पल-गवल गुलिय-अयसि-कुसुमप्पगासा सिरिवच्छंकियवच्छा कुसुम- कुंडल भद्दलया। णलकूबर समाणा।

आठवें अध्ययन का उत्क्षेप जान लेना चाहिए अर्थात् आर्य जम्बू ने आर्य सुधर्मा से श्रमण भगवान महावीर द्वारा प्ररूपित अंतगडदशा के तीसरे वर्ग के आठवें अध्ययन का अर्थ जानने की जिज्ञासा निवेदित की। आर्य सुधर्मा फरमाते हैं-

जम्बू! उस काल उस समय में द्वारिका नामक नगरी थी। प्रथम अध्ययन के समान सारा वर्णन जान लेना चाहिए। यावत् अर्हन्त अरिष्टनेमि स्वामी पधारे।

उस काल उस समय में अर्हन्त अरिष्टनेमि के समीप रहने वाले छः अनगार सहोदर भाई थे अर्थात् एक ही माता से जन्म लेने वाले थे। वे एक समान थे, समान त्वचा वाले एवं समान अवस्था वाले दिखाई देते थे। उनका रंग नीलकमल, भैंस के सींग के अंदर के गहन सार से निर्मित गोली एवं अलसी के फूल के समान था। उनके वक्षस्थल पर श्रीवत्स का चिन्ह था। वे दर्भ के फूल के समान भद्र यानी सुकुमार थे। वे नलकुबेर यानी वैश्रमण देव के पुत्र के समान थे। (यह लोक रूढ़ि से कहा है, क्योंकि देवों के पुत्र नहीं होते।)

छह अनगारों का तपश्चरण

21- तए णं से छ अणगारा जं चेव दिवसं मुण्डा भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइया, तं चेव दिवसं अरहं अरिट्ठणेमिं वंदंति णमंसंति वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-

इच्छामो णं भंते! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणा जावज्जीवाए छट्ठं छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणा विहरित्तए।

अहासुहं देवाणुप्पिया। मा पडिबंधं करेह।[5]

तए णं ते छ अणगारा अरहया अरिट्ठेणेमिणा अब्भणुण्णाया समाणा जावज्जीवाए छट्ठंछट्ठेणं जाव विहरंति।

वे छः अनगार जिस दिन मुण्डित होकर आगार धर्म को छोड़कर अनगार धर्म में दीक्षित हुए, उसी दिन अर्हन्त अरिष्टनेमि को वन्दन नमस्कार करते हैं तथा वन्दन नमस्कार करके उन्होंने इस प्रकार निवेदन किया-

भंते! आपकी अनुज्ञा (अनुमति) प्राप्त होने पर हम जीवन पर्यन्त, बीच में छोड़े बिना, बेले-बेले की तपस्यापूर्वक संयम तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरण करना चाहते हैं।

---

5. '**मा पडिबंधं करेह**' यह वाक्य जैनागमों में अनेक बार प्रयुक्त हुआ है। कोई व्यक्ति जब किसी शुभ कार्य को करने की भावना प्रभु के सामने प्रकट करता है तो प्रभु '**अहासुहं देवाणाप्पिया**' कहकर उसके लिए अनुज्ञा प्रदान करते हैं तथा साथ ही '**मा पडिबंधं करेह**' यह कहकर इस बात को प्रकट करते हैं कि किसी भौतिक आसक्ति में फंसकर शुभ कार्य का परित्याग मत कर देना। औपपातिक सूत्र में प्रतिबंध का स्वरुप इस प्रकार बतलाया गया है। '**सेय पडिबंधे चउव्विहे पण्णत्ते**' तंजहा-दव्वओ खित्तओ कालओ भावओ, दव्वओ णं सचित्तचित्त मीसिएसु दव्वेसु, खेत्तओ गामे वा णयरे वा रणणे वा खेत्ते वा खले वा धरे वा अंगणे वा, कालओ समझ वा आवलियाए वा जाव अयणे वा अण्णयरे वा दीहकालसंजोगे, भावओ कोहे वा माणे वा मायाए वा लोहे वा भए वा हासे वा।'

* वह प्रतिबंध (आसक्ति) चार प्रकार का कहा गया है। यथा द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से एवं भाव से। द्रव्य से सचित्त, अचित्त एवं मिश्र द्रव्यों पर प्रतिबंध, क्षेत्र से ग्राम पर, नगर पर, जंगल पर खेत पर, खलिहान पर धार पर, एवं आंगन पर प्रतिबंध, भाव से, क्रोध पर, मान पर, माया पर, लोभ पर, भय पर, हास्य पर प्रतिबंध।

इस पाठ के आधार पर '**मा पडिबंधं करेह**' का यह अर्थ निकलता है कि द्रव्य क्षेत्र, काल एवं भाव पर आसक्ति मत करना।

प्रभु ने फरमाया-देवनुप्रियो! जिससे तुम्हें सुख हो। प्रतिबंध यानी आसक्ति मत करो।

तब वे छः अनगार अर्हन्त अरिष्टनेमि से अनुज्ञा प्राप्त हो जाने पर जीवन पर्यन्त बेले-बेले की तपस्या करते हुए विचरण करने लगे।

पारणे के लिए द्वारिका में प्रवेश

22.तए णं ते छ अणगारा अण्णया कयाइं छट्ठक्खमणपारणगंसि पढमाए पोरिसीए सज्झायं करेंति जहा गोयम सामी जाव।

इच्छामो णं भंते! छट्ठक्खमणस्स पारणए तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणा तिहिं संघाडएहिं बारवईए णयरीए जाव अडित्तए। अहा सुहं देवाणुप्पिया।

तए णं ते छ अणगारा अरहया अरिट्ठणेमिणा अब्भणुण्णाया समाणा अरहं अरिट्ठणेमिं वंदंति णमंसंति वंदित्ता णमंसित्ता अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतियाओ सहसंबवणाओ उज्जाणाओ पडिणिक्खमंति पडिणिक्खमित्ता तिहिं संघाडएहिं अतुरियं जाव अडंति।

फिर अन्य किसी समय वे छः अनगार बेले के पारणे के दिन प्रथम प्रहर में स्वाध्याय करते हैं, द्वितीय प्रहर में ध्यान करते हैं, तृतीय प्रहर में मुखवस्त्रिका, झोली, पात्रादि की प्रतिलेखना करके गौतम स्वामी द्वारा आराधित विधि के अनुसार क्रियाएं करते हुए अर्हन्त अरिष्टनेमि को वन्दन नमस्कार करके निवेदन करने लगे-

भंते! आपकी अनुज्ञा प्राप्त होने पर बेले (षष्ठ भक्त) के पारणे के अवसर पर तीन सिंघाड़ों में (विभागों में) द्वारिका नगरी में उच्च, मध्यम एवं नीच (आर्थिक दृष्टि से) कुलों में भिक्षाचर्या हेतु भ्रमण करना चाहते हैं।

'देवानुप्रियो! जिससे तुम्हें सुख हो।'

तदनन्तर वे छः अनगार अर्हन्त अरिष्टनेमि के द्वारा अनुज्ञा प्राप्त होने पर अर्हन्त अरिष्टनेमि को वन्दन नमस्कार करते हैं, वन्दन नमस्कार करके अर्हन्त अरिष्टनेमि के पास से सहस्राम्रवन नामक उद्यान से बाहर निकलते हैं, बाहर निकलकर तीन सिंघाड़ों के रूप में त्वरा, चपलता एवं उतावलेपन से रहित होकर द्वारिका नगरी के उच्च, नीच एवं मध्यम कुलों में भिक्षाचर्या हेतु भ्रमण करते हैं।

तीनों सिंघाड़े क्रमशः देवकी के महल में

23. तत्थ णं एगे संघाडए बारवईए णयरीए उच्च-नीय-मज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अडमाणे अडमाणे वसुदेवस्स रण्णो देवईए देवीए गिहे अणुप्पविट्ठे।

तए णं सा देवई देवी ते अणगारे एज्जमाणे पासइ, पासित्ता हट्ठ तुट्ठ चित्तमाणंदिया पीईमणा परमसोमणस्सिया हरिसवसविसप्पमाण हियया आसणाओ अब्भुट्ठेइ अब्भुट्ठित्ता सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छइ, अणुगच्छित्ता तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव भत्तघरए तेणेव उवागच्छइ-उवागच्छित्ता, सीहकेसराणं मोयगाणं थालं, भरेइ भरित्ता, ते अणगारे पडिलाभेइ पडिलाभेत्ता वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता पडिविसज्जेइ।

तयाणंतरं दोच्चे संघाडए बारवइए णयरीए उच्च जाव पडिविसज्जेइ।

उन तीनों सिंघाड़ों में से एक सिंघाड़ा द्वारिका नगरी के उच्च, निम्न एवं मध्यम कुलों में सामुदानिक भिक्षा के लिए भ्रमण करता हुआ वसुदेव राजा की देवकी महारानी के घर में प्रविष्ट हुआ।

तब वह देवकी महारानी उस सिंघाड़े के उन दो अनगारों को आते हुए देखती है, देखकर हृष्ट-तुष्ट, आनंदयुक्त चित्त वाली, प्रीतिसहित मन वाली, अत्यंत सुंदर मानस वाली, हर्ष से खिलते हुए हृदय वाली होकर आसन से उठकर खड़ी होती है, खड़ी होकर सात-आठ कदम सामने जाती है, जाकर तीन बार आदक्षिणा (जिसे वंदन किया जा रहा है, उसके दाहिनी ओर से) प्रदक्षिणा करती है, करके वंदन नमस्कार करती है, वंदन नमस्कार करके जहाँ भोजनगृह था वहाँ पहुंचती है, पहुंचकर सिंहकेसर नामक मोदकों (लड्डुओं) से थाल भरती है, भरकर उन अनगारों को प्रतिलाभित करती (बहराती) है, प्रतिलाभित करके वंदन नमस्कार करती है, वंदन नमस्कार करके उन्हें विदा करती है।

उसके बाद दूसरा सिंघाड़ा द्वारिका नगरी में भिक्षार्थ भ्रमण करता हुआ महारानी देवकी के यहां पहुंचा। महारानी देवकी अत्यंत प्रसन्न हुई तथा उसने उन दो मुनियों को सिंहकेसर मोदकों से भरे थाल से मोदकों को बहराया।

देवकी की जिज्ञासा : अनगारों का समाधान

24. **तयाणंतरं च णं तच्चे संघाडए बारवईए णयरीए उच्चणीय जाव पडिलाभेइ पडिलाभित्ता एवं वयासी-किण्णं देवाणुप्पिया! 'कण्णहस्स वासुदेवस्स इमीसे बारवईए णयरीए णवजोयणवित्थिण्णाए जाव पच्चक्खं देवलोगभूयाए समणा णिग्गंथा उच्चणीय मज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अडमाणा भत्तपाणं णो लभंति जण्णं ताइं चेव कुलाइं भत्तपाणाए भुज्जो भुज्जो अणुप्पविसंति।**

तए णं ते अणगारा देवइं देविं एवं वयासी-णो खलु

देवाणुप्पिए! कण्हस्स वासुदेवस्स इमीसे बारवईए णयरीए जाव देवलोगभूयाए समणा णिग्गंथा उच्चणीय जाव अडमाणा भत्तपाणं णो लभंति णो चेव णं ताइं ताइं कुलाइं दोच्चं पि तच्चं पिठ भत्तपाणाए अणुप्पविसंति।'

तदनन्तर मुनियों का तीसरा सिंघाड़ा द्वारिका नगरी में उच्च निम्न एवं मध्यम कुलों में भिक्षा के लिए घूमता हुआ महारानी देवकी के घर में प्रविष्ट हुआ।

देवकी महारानी अनगारों को देखकर अत्यंत प्रफुलित हुई तथा मुनियों को वंदन नमस्कार करके भोजनगृह में सिंहकेसर मोदकों का थाल भरकर बहराया। बहराकर इस प्रकार से कहती है- 'देवानुप्रियो'! क्या कृष्ण वासुदेव की नौ योजन चौड़ी, बारह योजन लम्बी, प्रत्यक्ष देवलोक के समान इस द्वारिका नगरी में श्रमण निर्ग्रन्थ उच्च, निम्न एवं मध्यम कुलों में सामुदानिक भिक्षाचर्या में घूमते हुए आहार, पानी प्राप्त नहीं करते हैं कि जिससे बार-बार उन्हीं कुलों में आहार पानी के लिए प्रवेश करते हैं।

तब उन दो अनगारों ने देवकी महारानी को इस प्रकार कहा- देवानुप्रिये! कृष्ण वासुदेव की इस देवलोक के समान द्वारिका नगरी में

6. '**दोच्चंपि तच्चंपि**' इस आगमपाठ से यह भाव प्रकट होता है कि साधु का एक घर से दिन में एक बार ही आहार ग्रहण करना चाहिए। यदि एक दिन में एक घर से अनेक बार आहार ग्रहण करना आगमों के अनुसार वैधानिक होता तो देवकी महासती के मन में संशय उत्पन्न होने का कोई कारण नहीं था। मुनिराजों ने उत्तर देते हुए '**दोच्चंपि तच्चंपि**' कहकर यह बात स्पष्ट कर दी कि साधु को एक घर से दिन में दूसरी बार भी आहार ग्रहण नहीं करना चाहिए। यदि दो बार ग्रहण करना वैधानिक होता है एवं तीसरी बार ग्रहण करना ही दोषपूर्ण होता है तो मुनिराज '**तच्चं पि**' शब्द का ही प्रयोग करते '**दोच्चं पि**' का नहीं। इससे यह स्पष्ट है कि साधु को एक घर से दिन में एक बार आहार लेना ही शास्त्रसंगत है।

श्रमण निर्ग्रन्थ उच्च, निम्न एवं मध्यम कुलों में भ्रमण करते हुए भक्तपान प्राप्त नहीं करते हैं, ऐसी बात नहीं है। न ही श्रमण निर्ग्रन्थ दूसरी बार अथवा तीसरी बार उन्हीं कुलों में आहर पानी हेतु प्रवेश करते हैं।

25. एवं खलु देवाणुप्पिए! अम्हे भद्दिलपुरे णयरे णागस्स गाहावइस्स पुत्ता सुलसाए भारियाए अत्तया छ भायरो सहोयरा सरिसया जाव णलकूब्बरसमाणा अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म संसारभउविग्गा भीया जम्ममरणाणं मुंडा जाव पव्वइया। तए णं अम्हे जं चेव दिवसं पव्वइया तं चेव दिवसं अरहं अरिट्ठणेमिं वंदामो णमंसामो, वंदित्ता णमंसित्ता, इमं एयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हामो। इच्छामो णं भंते! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणा जाव अहासुहं देवाणुप्पिया!

तए णं अम्हे अरहया अरिट्ठणेमिणा अब्भणुण्णाया समाणा जावज्जीवाए छट्ठंछट्ठेणं जाव विहरामो। तं अम्हे अज्ज छट्ठक्खमणपारणगंसि पढमाए पोरिसिए जाव अडमाणा तव गेहं अणुप्पविट्ठा। तं णो खलु देवाणुप्पिए! तं चेव णं अम्हे, अम्हे णं अण्णे। देवइं देविं एवं वयइ वइत्ता जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया।

'देवानुप्रिये! हम भी भद्दिलपुर नगर में नाग गाथापति के पुत्र, सुलसा भार्या के आत्मज छः सहोदर, समान दिखने वाले, समान त्वचा वाले, समान वय वाले हैं, वैश्रमण देव के पुत्रवत् भाई हैं। हम अर्हन्त अरिष्टनेमि के पास धर्म को सुनकर, हृदय में धारण करके, संसार के भय से उद्विग्न होकर, जन्म मरण से भयभीत होकर, मुण्डित

होकर गृहस्थ धर्म को छोड़कर अनगार धर्म में दीक्षित हुए है। जिस दिन हमने दीक्षा ग्रहण की, उसी दिन अर्हन्त अरिष्टनेमि को वन्दना नमस्कार किया, वन्दन, नमस्कार करके भगवान की अनुज्ञापूर्वक इस प्रकार का अभिग्रहण किया कि हम जीवनभर बेले-बेले की तपस्या करते हुए विचरण करेंगे।

फिर हम अर्हन्त अरिष्टनेमि द्वारा अनुज्ञा (अनुमति) प्राप्त होने पर जीवन पर्यन्त बेले-बेले की तपस्या करते हुए विचरण कर रहे हैं। तदनुसार हमने आज बेले के पारणे के दिन प्रथम प्रहर में स्वाध्याय किया, यावत् इस द्वारिका नगरी में उच्च, निम्न एवं मध्यम कुलों में भिक्षा के लिए भ्रमण करते हुए तुम्हारे घर में प्रविष्ट हुए। इस प्रकार देवानुप्रिये! हम वे नहीं हैं (जो पहले आए थे), हम अन्य हैं। इस प्रकार देवकी महारानी को कहते हैं, कहकर जिस दिशा से आए थे उसी दिशा की ओर लौट गए।

देवकी का प्रभु से स्पष्टीकरण

26. तए णं तीसे देवईए देवीए अयमेयारुवे अज्झथिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे एवं खलु अहं पोलासपुरे णयरे अइमुत्तेणं कुमारसमणेणं बालत्तणे वागरिया- तुमं णं देवाणुप्पि! अट्ठ पुत्ते पयाइस्ससि सरिसए जाव णलकुब्बरसमाणे णो चेव णं भरहे वासे अण्णाओ अम्मयाओ तारिसए पुत्ते पयाइस्संति। तं णं मिच्छा इमं णं पच्चक्खमेव दिस्सई-भरहे वासे अण्णाओ वि अम्मयाओ खलु एरिसए जाव पुत्ते पयायाओ। तं गच्छामि णं अरहं अरिट्ठनेमिं वंदामि णमंसामि वंदित्ता णमंसित्ता इमं च णं एयारूवं वागरणं पुच्छिस्सामि त्ति कट्टु एवं संपेहेइ संपेहित्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी

लहुकरणजाणप्पवरं जाव उवट्ठवेंति। जहा देवाणंदा जाव पज्जुवासइ।

तब उस देवकी महारानी के इस प्रकार का अध्यवसाय, चिन्तन, प्रार्थित, मनोगत, संकल्प उत्पन्न हुआ कि मुझे पालासपुर नगर में अतिमुक्त नामक कुमारश्रमण ने बाल्यावस्था में इस प्रकार कहा था- 'देवानुप्रिये! तुम समान दिखने वाले, समान त्वचा वाले, समान वय वाले, वैश्रमण पुत्र के समान आठ पुत्रों को जन्म दोगी। भरत वर्ष में अन्य कोई माताएं वैसे पुत्रों को जन्म नहीं देगी।' यह कथन मिथ्या हो गया। यह प्रत्यक्ष दिखाई दे रहा है कि भरत वर्ष में अन्य माताओं ने ऐसे पुत्रों को जन्म दिया है। अतः मैं अर्हन्त अरिष्टनेमि के पास जाऊं, उन्हें वन्दन नमस्कार करूँ, वन्दन नमस्कार करके इस विषय का स्पष्टीकरण पूछूं। ऐसा विचार करती है, विचार करके कौटुम्बिक पुरुषों (अनुचरों) को बुलाती है। बुलाकर इस प्रकार कहने लगी- शीघ्र चलने वाले, धर्म के कार्यों में काम आने वाले रथ को तैयार करो'। कौटुम्बिक पुरुषों ने रथ को तैयार करके निवेदन किया कि रथ तैयार हो चुका है। जिस प्रकार देवानन्दा ब्राह्मणी के भगवान के चरणों में उपस्थित होने का वर्णन है, उसी प्रकार महारानी देवकी भी स्नान करके, उत्तम वस्त्राभूषणों को धारण करके अनेक दासियों आदि के साथ रथ पर बैठकर अर्हन्त अरिष्टनेमि के चरणों में पहुंची, वन्दन नमस्कार करके पर्युपासना करने लगी।

27. **तए णं अरहा अरिट्ठणेमी देवइं देविं एवं वयासी- से नूणं तव देवई! इमे छ अणगारे पासित्ता अयमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पण्णे-एवं खलु (अहं) पोलासपुरे णयरे अइमुत्तेणं जाव तं णिगच्छसि णिग्गच्छित्ता जेणेव मम अंतियं**

तेणेव हव्वमागया। से नूणं देवई! अट्ठे समट्ठे?

"हंता अत्थि।"

उस वक्त अर्हन्त अरिष्टनेमि ने देवकी महारानी को इस प्रकार फरमाया- देवकी! इन छः अनगारों को देखकर निश्चय ही तुम्हारे मन में इस प्रकार का अध्यवसाय, चिंतन, प्रार्थित, मनोगत, संकल्प उत्पन्न हुआ कि पोलासपुर नगर में मुझे अतिमुक्त कुमार ने यह कहा था यावत् तुम घर से निकलकर मेरे पास आई हो। देवकी, क्या यह अर्थ यथार्थ है'।

महारानी देवकी ने कहा- हां, यह अर्थ यथार्थ है।

28. **एवं खलु देवाणुप्पिए! तेणं कालेणं तेणं समएणं भद्दिलपुरे णयरे णागे णामं गाहावई परिवसई-अड्ढे।**

तस्स णं णागस्स गाहावइस्स सुलसा णामं भारिया होत्था। तए णं सा सुलसा बालत्तणे चेव नेमित्तिएणं वागरिया-एस णं दारिया णिंदू भविस्सइ।

तए णं सा सुलसा बालप्पभिइं चेव हरिणेगमेसिं देव भत्तया यावि होत्था। हरिणेगमेसिस्स पडिमं करेइ करित्ता कल्लाकल्लिं ण्हाया जाव पायच्छित्ता उल्लपडसाडया महरिहं पुप्फच्चयं करेइ, करित्ता जाणुपायपडिया पणामं करेइ, करित्ता तओ पच्छा आहारेइ वा नीहारेइ वा वरइ वा।

प्रभु ने फरमाया- 'देवानुप्रिये। उस काल उस समय में भद्दिलपुर नामक नगर था। वहाँ नाग नामक गाथापति रहता था जो ऋद्धि सम्पन्न था।

उस नाग नामक गृहस्वामी के सुलसा नामक भार्या (पत्नी) थी। सुलसा के लिए उसके बाल्यकाल में ही नैमित्तिक ने कहा था-यह बालिका निन्दू यानी मृत बच्चों को जन्म देने वाली होगी।

फिर वह सुलसा बाल्यकाल से ही हरिणैगमेषी देव की भक्त हो गई। हरिणैगमेषी देव की प्रतिमा बनाती है, बनाकर नित्य प्रति स्नान करके यावत् कौतुक, मंगल, प्रायश्चित्त आदि करके गीली साड़ी को धारण करके पूजा के योग्य फूलों से पूजा करती है, करके घुटनों के बल बैठकर प्रणाम करती है, प्रणाम करके आहार, निहार अथवा अन्य कार्य करती है।

29. **तए णं तीसे सुलसाए गाहावइणीए भत्तिबहुमाणसुस्सूसाए हरिणेगमेसी देवे आराहिए यावि होत्था। तए णं से हरिणेगमेसी देवे सुलसाए गाहावइणीए अणुकंपणट्ठयाए सुलसं गाहावइणिं तुमं च णं दो वि समउउयाओ करेई। तए णं तुब्भे दो वि सममेव गब्भे गिण्हह, सममेव गब्भे परिवहह, सममेव दारए पयायह। तए णं सा सुलसा गाहावइणी विणिहायमावण्णे दारए पयायइ।**

तए णं से हरिणेगमेसी देवे सुलसाए अणुकंपणट्ठयाए विणिहायमावण्णे दारए करयलसंपुडेणं गिण्हइ, गिण्हित्ता तव अंतियं साहरइ। तं समयं च णं तुमं पि नवण्हं मासाणं सुकुमालदारए पसवसि। जे वि य णं देवाणुप्पि! तव पुत्ता ते वि य तव अंतियाओ करयलसंपुडेणं गिण्हइ, गिण्हित्ता सुलसाए गाहावइणीए अंतिए साहरइ। तं तव चेव णं देवई! एए पुत्ता, णो चेव सुलसाए गाहावइणीए।

उस सुलसा गाथापत्नी की भक्ति, बहुमान एवं सुश्रुषा से हरिणैगमेषी देव आराधित हो गया। तब वह हरिणैगमेषी देव सुलसा

गृहस्वामिनी की अनुकम्पा के लिए सुलसा गाथापत्नी को और तुमको (देवकी महारानी को) दोनों को एक साथ रजस्वला करता है। फिर तुम दोनों एक साथ ही गर्भवती होती, एक साथ ही गर्भ का परिवहन करती तथा एक साथ ही पुत्रों को जन्म देती, वह सुलसा गाथापत्नी मरे हुए पुत्रों को जन्म देती।

तब वह हरिणैगमेषी देव सुलसा की अनुकम्पा के लिए मृत पुत्रों को दोनों हथेलियों से ग्रहण करता, ग्रहण करके तुम्हारे पास लाकर रख देता। उसी समय तुम भी नौ महीने पूर्ण हो जाने पर सुकुमाल पुत्रों को जन्म देती। देवानुप्रिये! जो तुम्हारे पुत्र होते, उन्हें भी वह हरिणैगमेषी देव तुम्हारे पास से दोनों हथेलियों से उठाता, उठाकर सुलसा गाथापत्नी के पास ले जाकर रख देता। अतः देवकी! ये पुत्र तुम्हारे ही हैं, सुलसा गाथापत्नी के नहीं।

पुत्र दर्शन से देवकी का हर्षातिरेक

30. तए णं सा देवई देवी अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्मं हट्ठतुट्ठ जाव हियया अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ वंदित्ता णंमसित्ता जेणेव ते छ अणगारा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता ते छप्पि अणगारे वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता आगयपण्हुया पप्फुयलोयणा कंचुयपरिक्खित्तया दरिय-वलय-बाहाधाराहय-कलंब-पुप्फगं विव समूससियरोमकूवा ते छप्पि अणगारे अणिमिसाए दिट्ठीए पेहमाणी-पेहमाणी सुचिरं णिरिक्खइ णिरिक्खित्ता वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव अरहा अरिट्ठणेमि तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ करेत्त वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता तमेव धम्मियं जाणप्पवरं दुरुहइ

दुरुहित्ता जेणेव बारवई णयरी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता बारवइं णयरिं अणुप्पविसइ अणुप्पविसित्ता जेणेव सए गिहे, जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता, धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ पच्चोरुहित्ता जेणेव सए वासघरे जेणेव सए सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सयंसि सयणिज्जंसि णिसीयइ।

उसके बाद वह देवकी महारानी अर्हन्त अरिष्टनेमि के पास इस विषय को सुनकर एवं हृदय में धारण करके हर्षित हुई। अत्यंत प्रफुलित हृदय वाली हुई तथा अर्हन्त अरिष्टनेमि को वन्दन नमस्कार करती है, वन्दन नमस्कार करके जहाँ वे छः अनगार थे, वहाँ उनके पास आई, आकर उन छहों अनगारों को वन्दन नमस्कार करती है, वन्दन नमस्कार करके पुत्र प्रेम से, जिसके स्तनों में दूध आ गया हो, जिसके नेत्र आनंदजल से भर गए हों, हर्षातिरेक से शरीर के फूल जाने जिसकी कंचुकी विस्तृत हो गई हों, हर्ष से भुजाओं के फूल जाने पर जिसके कड़े टूट गए हों, मेघ की जलधारा से जैसे कदम्ब का फूल विकसित हो जाता है, वेसे ही जिसके रोम हर्ष से पुलिकत हो गए हों, ऐसी वह देवकी महारानी उन छहों अनगारों को अपलक दृष्टि से देखती-देखती काफी समय तक निरखती है, निरख कर वन्दन नमस्कार करती है, वन्दन नमस्कार करके जहाँ अर्हन्त अरिष्टनेमि थे, वहाँ आई, आकर अर्हन्त अरिष्टनेमि को तीन बार आदक्षिणा प्रदक्षिणा करके वन्दन नमस्कार करती है, वन्दन नमस्कार करके श्रेष्ठ धार्मिक रथ पर आरोहण करती है, करके जहाँ द्वारिका नगरी थी वहाँ आती है, आकर द्वारिका में प्रवेश करती है, प्रवेश करके जहाँ अपना महल था, जहाँ बाह्य उपस्थान शाला थी, वहाँ आती है, आकर श्रेष्ठ धार्मिक रथ से नीचे उतरती है, उतरकर जहाँ अपना निवासगृह था, जहाँ अपनी शय्या थी, वहाँ पहुंचती है, पहुंचकर अपनी शय्या पर बैठ जाती है।

देवकी द्वारा आर्त्तध्यान

31. तए णं तीसे देवईए देवीए अयं अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए, संकप्पे, समुप्पन्ने एवं खलु अहं सरिसए जाव नलकूब्बरसमाणे सत्त पुत्ते पयाया णो चेव णं मए एगस्स वि बालत्तणए समणुब्भूए। एस वि य णं कण्हे वासुदेवे छण्हं मासाणं मम अंतियं पायवंदए हव्वमागच्छइ। तं धण्णाओ णं ताओ अम्मयाओ, पुण्णाओ णं ताओ अम्मयाओ कयपुण्णाओ णं ताओ अम्मयाओ कयलक्खणाओ णं ताओ अम्मयाओ जासिं मण्णे णियगकुच्छिसंभूयाइं, थणदुद्ध-लुद्धयाइं महुरसमुल्लावयाइं मम्मणपजंपियाइं थण-मूलकक्खदेसभागं अभिसरमाणाइं मुद्धयाइं पुणो य कोमलकमलोवमेहिं हत्थेहिं गिण्हिऊण उच्छंगे णिवेसियाइं देंति समुल्लावए सुमहुरे पुणो पुणो मंजुलप्पभणिए। अहं णं अधण्णा अपुण्णा अकयपुण्णा अकयलक्खणा एत्तो एगयरमवि ण पत्ता, ओहय जाव झियायइ।

तत्पश्चात् उस देवकी महारानी के यह अध्यवसाय, चिन्तन, प्रार्थित, मनोगत, संकल्प उत्पन्न हुआ कि मैंने समान दिखने वाले यावत् वैश्रमण पुत्र के समान सात पुत्रों को जन्म दिया किन्तु एक पुत्र के भी बाल्यकाल का अनुभव नहीं किया। यह कृष्ण वासुदेव भी छः-छः महीनों में मेरे पास चरण वन्दन करने के लिए आता है। मैं मानती हूँ कि वे माताएं धन्य हैं, वे माताएं पुण्यशालिनी हैं, वे माताएं पूर्व में पुण्य कमाने वाली हैं, उन माताओं के लक्षण सफल हुए हैं जिनकी कुक्षि से उत्पन्न संतानें जो उनके स्तन के दुग्ध पर लुब्ध होने वाली मधुर ध्वनि वाली, तुतलाती बोली में बोलने वाली, स्तनमूल से कांख की ओर सरकने वाली, भोली भाली हैं, उन्हें अपने कमल के समान

कोमल हाथों से उठाकर गोद में बिठाती हैं, उन्हें मधुर बोल सुनाती हैं तथा बार-बार उनसे मीठी-मीठी बातें करती हैं। मैं अधन्य हूं, पुण्यहीन हूं, मैंने पूर्व में पुण्य नहीं कमाएं है, मेरे लक्षण सार्थक नहीं हुए हैं, जिससे मैं एक भी सन्तान सम्बन्धी सुख को प्राप्त नहीं कर सकी। ऐसा विचार करते हुए देवकी महारानी मन से दुखी होकर भूमि पर नजरें गड़ाकर हथेली पर मुंह रखकर आर्त ध्यान करने लगी।

श्रीकृष्ण के समक्ष वेदना की अभिव्यक्ति

32. **इमं च णं से कण्हे वासुदेवे ण्हाए जाव विभूसिए देवईए देवीए पायवंदए हवमागच्छइ तएणं से कण्हे वासुदेवे देवइं देविं पासइ पासित्ता देवईए देवीए पायग्गहणं करेइ करित्ता देवइं देविं एवं वयासी-**

अण्णया णं अम्मो! तुब्भे ममं पासित्ता हट्ठतुट्ठा जाव भवह, किण्णं अम्मो! अज्ज तुब्भे ओहयमण संकप्पा जाव झियायह?

इतने में ही कृष्ण वासुदेव स्नान करके यावत् सभी अलकांरों से विभूषित होकर देवकी महारानी की चरण वन्दना हेतु आते हैं। तब वे कृष्ण वासुदेव देवकी महारानी को देखते हैं, देखकर देवकी महारानी की चरणवन्दना करते हैं, करके देवकी महारानी को इस प्रकार कहने लगे-

अम्मा! (मां) अन्य समय में आप मुझे देखकर अत्यंत प्रसन्न होती थी किन्तु अम्मा! क्या कारण है कि आज आप खिन्न होकर भूमि पर दृष्टि टिकाकर हथेली पर मुंह रखकर आर्तध्यान कर रही हैं।

33. **तए णं सा देवई देवी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी-एवं खलु अहं पुत्ता! सरिसए जाव णलकूब्बरसमाणे सत्त पुत्ते पयाया, णो**

चेव णं मए एगस्स वि बालत्तणे अणुब्भूए। तुमं पि य णं पुत्ता! छण्हं-छण्हं मासाणं ममं अतियं पायवंदए हव्वमागच्छसि। तं धण्णाओ णं ताओ अम्मयाओ जाव झियामि।

तब देवकी महारानी ने कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार कहा- 'वत्स! मैंने समान दिखने वाले यावत् वैश्रमण पुत्र के समान सात पुत्रों को जन्म दिया किन्तु मैंने एक के भी बालकपन का अनुभव नहीं किया। हे पुत्र! तुम भी छह-छह महीने से मेरे पास चरणवंदना के लिए आते हो। अतः मैं मानती हूँ कि वे माताएं धन्य हैं जो अपने पुत्रों की बचपन की क्रीडाओं का अनुभव करती हैं। किन्तु में अधन्य हूं। पुण्यहीन हूँ कि मुझे ऐसा अवसर प्राप्त नहीं हुआ। इस कारण से मैं आर्तध्यान कर रही हूं।

श्रीकृष्ण द्वारा देवाराधना

34. **तए णं से कण्हे वासुदेवे देवइं देविं एवं वयासी - मा णं तुब्भे अम्मो! ओहयमणसंकप्पा जाव झियायह अहण्णं तहा जतिस्सामि जहा णं ममं सहोदरे कणीयसे भाउए भविस्सइ त्ति कट्टु देवइं देविं ताहिं इट्ठाहिं जाव वग्गूहिं समासासेइ समासासित्ता। तओ पडिणिक्खमई पडिणिक्खमित्ता जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता जहा अभओ। णवरं हरिणेगमेसिस्स अट्ठमभत्तं पगेण्हइ जाव अंजलिं कट्टु एवं वयासी-**

इच्छामि णं देवाणुप्पिया सहोदरं कणीयसं भाउयं विदिण्णं।

तए णं से हरिणेगमेसी देवे कण्हं वासुदेवं एवं वयासी-होहिइ णं देवाणुप्पिया! तव देवलोयचुए सहोदरे कणीयसे भाउए। से णं उम्मुक्क बालभावे जोव्वणे-गमणुप्पत्ते अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतियं

मुण्डे जाव पव्वइस्सइ। कण्हं वासुदेवं दोच्चं पि तच्चं पि वयई वईत्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए।

तदनन्तर वे कृष्ण वासुदेव देवकी महारानी को इस प्रकार कहने लगे-अम्मा! आप खिन्न होकर आर्तध्यान मत करो। मैं इस प्रकार से यत्न करूंगा जिससे मेरा सहोदर छोटा भाई हो जाएगा, इस तरह देवकी महारानी को उन इष्ट, मनोज्ञ वचनों के द्वारा आश्वस्त करते हैं। आश्वस्त करके वहाँ से निकलते हैं, निकलकर जहाँ पौषधशाला थी, वहाँ आते है, आकर पौषधशाला का प्रमार्जन करते हैं। अभयकुमार के समान ही तेले का तप करते हैं। फर्क इतना है कि हरिणैगमेषी देव के लिए तेले की आराधना करते हैं। यथासमय हरिणैगमेषी देव प्रकट हुआ तथा निवेदन किया कि कहो, क्या करूं, क्या दूं, आपकी क्या इच्छा है? श्रीकृष्ण वासुदेव ने पौषध को पूर्ण करके हाथ जोड़कर कहा-

देवानुप्रिय! मैं चाहता हूँ कि मेरा सहोदर छोटा भाई दिया जाए। तब हरिणैगमेषी देव ने कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार कहा-देवानुप्रिय! देवलोक से च्यवकर तुम्हारा छोटा भाई अवश्य होगा। वह बाल्यावस्था का परित्याग करके यौवन में प्रवेश करने पर अर्हन्त अरिष्टनेमि के पास मुण्डित होकर दीक्षा ग्रहण कर लेगा। इस प्रकार दूसरी बार और तीसरी बार कहता है, कहकर वह देव जिस दिशा से आया था, उसी दिशा में लौट गया।

श्रीकृष्ण द्वारा देवकी को आश्वासन

35. **तए णं से कण्हे वासुदेवे पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ पडिणिक्खमित्ता जेणेव देवइं देविं तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता देवईए देवीए पायग्गहणं करेइ करेत्ता एवं वयासी-**

होहिइ णं अम्मो! ममं सहोयरे कणीयसे भाउए त्ति कट्टु देवइं देविं ताहिं इट्ठाहिं जाव आसासेइ आसासित्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए।

तदनन्तर वे कृष्ण वासुदेव पौषधशाला से निकलते हैं, निकलकर जहाँ देवकी महारानी थी, वहाँ आते हैं, आकर देवकी महारानी के चरण स्पर्श करते हैं, करके इस प्रकार कहने लगे-

''अम्मा! मेरा सहोदर छोटा भाई हो जाएगा।'' ऐसा कहकर देवकी महारानी को इष्ट, मनोज्ञ वचनों से आश्वस्त करते हैं, करके जिस दिशा से आए थे, उस दिशा में वापस लौट गए।

गजसुकुमाल का जन्म और वृद्धि

36. तए णं सा देवई देवी अण्णया कयाइं तंसि तारिसगंसि जाव सीहं सुमिणे पासित्ता पडिबुद्धा जाव पामिया हट्ठतुट्ठहियया तं गब्भं सुहंसुहेणं परिवहइ।

तए णं सा देवई देवी नवण्हं मासाणं पडिपुण्णाणं जासुमणा -रत्तबंधुजीवय-लक्खारस-सरस-पारिजातक तरुण दिवायर-समप्पभं सव्वणयणकंतं-सुकुमालं जाव सुरुवं गयतालुसमाणं दारयं पयाया। जम्मणं जहा मेहकुमारे जाव जम्हा णं अम्हं इमे दारए गयतालुसमाणे तं होउ णं अम्ह एयस्स दारगस्स नामधेज्जे गयसुकुमाले।

तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो। णामं करेई-गयसुकुमालोत्ति सेसं जहा मेहे जाव अलं भोगसमत्थे जाए यावि होत्था।

तब वह देवकी महारानी अन्य किसी समय सुकोमल शय्या पर अर्द्धनिद्रित अवस्था में सोई हुई सिंह का स्वप्न देखकर जागृत हुई। महाराज वासुदेव को मधुर स्वरों से जगाकर स्वप्न का वृत्तान्त सुनाया।

प्रातःकाल स्वप्न पाठकों को बुलाया गया। उन्होंने स्वप्न का फल बतलाया कि महारानी देवकी सवा नौ महीने पूर्ण होने पर कुलदीपक पुत्र को जन्म देगी जो या तो मांडलिक राजा बनेगा अथवा भावितात्मा अनगार बनेगा। देवकी महारानी उस गर्भ का सुखपूर्वक पालन करने लगी।

नौ महीने पूर्ण हो जाने पर देवकी महारानी ने जपाकुसुम, लाल बन्धुजीवक, लाख के रस, बिना मुरझाये हुए पारिजात के फूल एवं उगते हुए सूर्य के समान प्रभा वाले, सभी मनुष्यों के नयनों को कमनीय लगने वाले सुकुमाल यावत् सुन्दर रूप वाले हाथी के तालु के समान कोमल एवं लाल वर्ण के पुत्र को जन्म दिया। जन्म महोत्सव आदि समग्र लौकिक कृत्य सम्पन्न हुए। नामकरण के प्रसंग पर माता-पिता ने विचार किया कि हमारा यह पुत्र गज के तालु के समान है, अतः इस बालक का नाम गजसुकुमाल होवे।

माता-पिता ने उस बालक का नाम गजसुकुमाल रख दिया। गजसुकुमाल पांच धायमाताओं से संरक्षित होकर वृद्धि को प्राप्त होने लगा। आठ वर्ष से अधिक हो जाने पर उन्हें कलाचार्य के पास भेजा गया जहाँ से वह बहत्तर कलाओं की शिक्षा ग्रहण करके लौटा। मेघकुमार के समान ही यह सारा विकास प्राप्त करते हुए वह गजसुकुमाल विकाल में भी निर्भयतापूर्वक घूमने में समर्थ, साहसी एवं भोगों के भोगने में सक्षम हो गया।

राजमार्ग पर सोमा की क्रीड़ा

37. तत्थ णं बारवईए णयरिए सोमिले णाम माहणे परिवसइ अड्ढे। रिउव्वेय जाव सुपरिणिट्ठिए यावि होत्था। तस्स सोमिलमाहणस्स

सोमसिरी णामं माहणी होत्था। सुकुमाल जाव सुरूवा। तस्स णं सोमिलस्स धूया सोमसिरीए माहणिए अत्तया सोमा णामं दारिया होत्था। सुकुमाल जाव सुरूवा। रूवेणं जोव्वणेणं लाव्वणेणं उक्किट्ठा उक्किट्ठसरीरा यावि होत्था।

तए णं सा सोमा दारिया अण्णया कयाइं ण्हाया जाव विभूसिया, बहूहिं खुज्जाहिं जाव परिक्खित्ता सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ पडिणिक्खमित्ता जेणेव रायमग्गे तेणेव उवागच्छइ-उवागच्छित्ता रायमग्गंसि कणगतिंदूसएणं कीलमाणी चिट्ठइ।

उस द्वारिका नगरी में सोमिल नामक ऋद्धि सम्पन्न ब्राह्मण रहता था। वह ऋग्वेद आदि चारों वेदों, ज्योतिष, कल्प, निरुक्त, निघण्टु आदि वेदांगों का विशिष्ट ज्ञाता था। उस सोमिल ब्राह्मण की सोमश्री नामक पत्नी थी। वह सुकुमाल हाथ पैरों वाली यावत सुरूपवती थी। उस सोमिल ब्राह्मण की पुत्री सोमश्री ब्राह्मणी की आत्मजा सोमा नामक बालिका थी। वह सुकुमाल करचरण वाली यावत् सुन्दर रूप वाली थी। रूप, यौवन और लावण्य की दृष्टि से वह अत्यंत उत्कृष्ट और उत्कृष्ट शरीर वाली थी।

वह सोमा बालिका अन्य किसी समय स्नान करके यावत् श्रेष्ठ आभूषणों से विभूषित होकर अनेक कुब्जा आदि दासियों से घिरी हुई अपने घर से निकली, निकलकर जहाँ राजमार्ग था, वहाँ आती है, आकर राजमार्ग पर सोने की गेंद से खेलने लगी।

सोमा की याचना

38. **तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठनेमि समोसढे। परिसा णिग्गया।**

तए णं से कण्हे वासुदेवे इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे ण्हाए जाव विभूसिए गयसुकुमालेणं कुमारेणं सद्धिं हत्थिखंधवरगए संकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं सेयवर-चामराहिं उद्धुव्वमाणीहिं बारवइए णयरीए मज्झंमज्झेणं अरहओ अरिट्ठनेमिस्स पायवंदए णिग्गच्छमाणे सोमं दारियं पासइ पासित्ता सोमाए दारियाए रुवेण य जोव्वणेण य लावण्णेण य जायविम्हिए तएणं से कण्हे वासुदेवे कोडुंबियपुरिस सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी- गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! सोमिलं माहणं जायित्ता सोमं दारियं गिण्हइ, गिण्हित्ता कण्णंतेउरंसि पक्खिवह। तए णं एसा गयसुकुमालस्स कुमारस्स भारिया भविस्सइ। तए णं कोडुंबिय पुरिसा जाव पच्चप्पिणंति।

उस काल उस समय में अर्हन्त अरिष्टनेमि द्वारिका नगरी के बाहर उद्यान में पधारे। जनता प्रभु की पर्युपासना हेतु निकली।

उस समय कृष्ण वासुदेव को यह बात ज्ञात होने पर उन्होंने स्नान किया यावत् सभी आभूषणों से विभूषित होकर गजसुकुमाल कुमार के साथ हाथी के स्कन्ध पर आरूढ़ होकर अनुचरों द्वारा कोरण्ट फूलों की माला से युक्त छत्र के धारण किए जाते हुए तथा श्रेष्ठ श्वेत चंवरों के ढुलाए जाते हुए वे द्वारिका नगरी के मध्य से होकर अर्हन्त अरिष्टनेमि की चरण वंदना के लिए निकलते हुए सोमा बालिका को देखते हैं, देखकर सोमा बालिका के रूप, यौवन एवं लावण्य से विस्मित हो गए। तत्पश्चात् वे कृष्ण वासुदेव कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाते हैं तथा बुलाकर इस प्रकार कहा- 'देवानुप्रियो! तुम सब जाओ, सोमिल ब्राह्मण से याचना करके सोमा बालिका को ग्रहण करो एवं ग्रहण करके कन्याओं के अन्त:पुर में पहुंचा दो। आगे चलकर यह गजसुकुमाल कुमार की भार्या (पत्नी) बनेगी।' उन कौटुम्बिक पुरुषों ने

वैसा ही किया तथा सम्पूर्ण आज्ञा का अनुपालन करके पुनः कृष्ण वासुदेव को कार्य के सम्पन्न हो जाने का निवेदन कर दिया।

अर्हन्त अरिष्टनेमि के चरणों में गजसुकुमाल

39. तए णं से कण्हे वासुदेवे बारवईए णयरीए मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ णिग्गच्छित्ता जेणेव सहसंबवणे उज्जाणे जाव पज्जुवासाइ।

तदनन्तर वे कृष्ण वासुदेव गजसुकुमाल सहित द्वारिका नगरी के बीचों-बीच से निकलते हैं, निकलकर जहाँ सहस्राम्रवन उद्यान था वहाँ पहुंचकर हाथी से नीचे उतरे, अर्हन्त अरिष्टनेमि के चरणों में वन्दन नमस्कार करके उनकी पर्युपासना करने लगे।

देशना से गजसुकुमाल की भावविशुद्धि

40. तए णं अरहा अरिट्ठणेमि कण्हस्स वासुदेवस्स गयसुकुमालस्स कुमारस्स तीसे य धम्मं कहेइ। कण्हे पडिगए। तए णं से गयसुकुमाले अरहओ अरिट्ठनेमिस्स अंतियं धम्मं सोच्चा जं णवरं अम्मापियरं आपुच्छामि जहा मेहो मिहिलियावज्जं जाव वड्ढियकुले।

उस समय अर्हन्त अरिष्टनेमि कृष्ण वासुदेव को, गजसुकुमाल कुमार को और विशाल परिषद् को धर्म का उपदेश देते हैं। देशना सुनकर कृष्ण वासुदेव लौट गए। तब वह गजसुकुमाल अर्हन्त अरिष्टनेमि के पास धर्म सुनकर हृष्ट तुष्ट हुए। खड़े होकर निवेदन करने लगे, 'भंते! मैं निर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा करता हूं, प्रतीति करता हूं, रुचि करता हूं। मैं माता-पिता से अनुमति लेकर आपके चरणों में अनगार धर्म को स्वीकार करना चाहता हूं।'

प्रभु ने फरमाया- 'जिससे तुम्हें सुख हो। प्रतिबंध मत करना।'

गजसुकुमाल कुमार महलों में पहुंचे एवं दीक्षा की अनुमति मांगी। देवकी महारानी ने विलाप करते हुए गजसुकुमाल को विषयों की ओर आकृष्ट करने वाले अनेक तर्कों से तथा संयम के अनेक कष्ट बतलाकर मनाने का प्रयत्न किया। गजसुकुमाल के द्वारा माता-पिता के समक्ष संसार के सही स्वरूप का प्रस्तुतीकरण किया गया। जिस प्रकार मेघकुमार की माता-पिता से चर्चा हुई थी उसी प्रकार यहां भी जान लेना चाहिए। फर्क इतना है कि मेघकुमार विवाहित था, अतः उसकी माता ने उसे यह भी कहा था कि तुम अपनी स्त्रियों के साथ विषय सुख भोगो। किन्तु यहां गजसुकुमाल की माता ने गजसुकुमाल के अविवाहित होने के कारण यह चर्चा नहीं की।

श्रीकृष्ण की समझाईश

41. **तए णं कण्हे वासुदेवे इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे जेणेव गयसुकुमाले कुमारे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता गयसुकुमालं कुमारं आलिंगइ, आलिंगित्ता उच्छंगे णिवेसेइ णिवेसित्ता एवं वयासी-तुमं सि णं ममं सहोयरे कणीयसे भाया। तं मा णं तुमं देवाणुप्पिया! इयाणिं अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए मुण्डे जाव पव्वयाहि। अहण्णं तुमे बारवईए णयरीए महया-महया रायाभिसेएणं अभिसिंचिस्सामि।**

तए णं से गयसुकुमाले कुमारे कण्हेणं वासुदेवेणं एवं वुत्ते समाणे तुसिणीए संचिट्ठइ।

तब इस बात के मालूम होने पर वे कृष्ण वासुदेव जहाँ गजसुकुमाल कुमार थे, वहाँ आते हैं। आकर गजसुकुमाल को आलिंगन करते हैं। आलिंगन करके गोद में बिठाते है, बैठाकर इस प्रकार कहने लगे-तुम मेरे सहोदर छोटे भाई हो। अतः देवानुप्रिय! तुम अर्हन्त

अरिष्टनेमि के पास मुंडित होकर अनगार धर्म में दीक्षित मत होओ। मैं तुम्हारा द्वारिका नगरी में महामहोत्सव के साथ राज्याभिषेक करूंगा।

तब वह गजसुकुमाल कुमार कृष्ण वासुदेव के द्वारा ऐसा कहे जाने पर (राज्याभिषेक के प्रति उदासीन भाव रखते हुए) मौन रहता है।

42. **तए णं से गयसुकुमाले कुमारे कण्हं वासुदेवं अम्मापियरो य दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी-**

एवं खलु देवाणुप्पिया! माणुस्सया कामा असुई असासया वंतासवा खेलासवा जाव विप्पजहियव्वा भविस्संति, तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए जाव पव्वइत्तए।

पुनः वह गजसुकुमाल कुमार कृष्ण वासुदेव को एवं अपने माता-पिता को दूसरी बार और तीसरी बार भी इस प्रकार कहने लगा-

देवानुप्रियो! निश्चय ही ये मनुष्य सम्बन्धी कामभोग अशुचिरूप, अशाश्वत, उल्टी कराने वाले, कफ उत्पन्न करने वाले आदि रूप में होकर पहले या बाद में अवश्य छोड़ने योग्य हैं। अतः देवानुप्रियो! आपकी अनुमति प्राप्त होने पर मैं अर्हन्त अरिष्टनेमि के पास अनगार धर्म को स्वीकार करना चाहता हूं।

राजा से अनगार बने

43. **तए णं तं गयसुकुमाल कुमारं कण्हे वासुदेवे अम्मापियरो य जाहे णो संचाएन्ति बहुयाहिं अणुलोमाहिं जाव आघवित्तए ताहे अकामाइं चेव गयसुकुमालं कुमारं एवं वयासी-तं इच्छामो णं ते जाया! एगदिवसमवि रज्जसिरिं पासित्तए।**

तए णं गयसुकुमाले कुमारे कण्हं वासुदेवं अम्मापियरं च अणुवत्तमाणे तुसिणीए संचिट्ठइ। जाव णिक्खमणं जहा महब्बलस्स जाव तमाणाए तहा जाव संजमित्तए।

तए णं से गयसुकुमाले अणगारे जाए ईरियासमिए जाव गुत्तबंभयारी इणमेव णिग्गंथ पावयणं पुरओ काउं विहरइ।

फिर कृष्ण वासुदेव और माता-पिता जब गजसुकुमाल कुमार को अनेक प्रकार के विषयों के अनुकूल कथनों से तथा संयम के प्रतिकूल कथनों से समझाने में समर्थ नहीं हुए तब विवश होकर गजसुकुमाल कुमार को इस प्रकार कहा-हे पुत्र! एक दिन के लिए ही सही, हम तुम्हें राज्य की शोभा सहित देखना चाहते हैं।

गजसुकुमाल कुमार कृष्ण वासुदेव और माता-पिता का अनुवर्तन करते हुए (उनके कथन का निषेध न करते हुए मौन हो जाते हैं।) महाबल कुमार के समान ही महान महोत्सव के साथ गजसुकुमाल कुमार का राज्याभिषेक किया गया। माता-पिता ने पूछा-कहो पुत्र! तुम्हारी क्या इच्छा है? तुम्हें क्या दें? राजा गजसुकुमाल ने रजोहरण, पात्र लाने के लिए एवं नाई को बुलाने के लिए कहा। रजोहरण पात्रादि लाए गए। नाई उपस्थित हुआ एवं चार पट वाले मुखवस्त्र को धारण करके गजसुकुमाल के अग्रकेशों को काटता है। कृष्ण वासुदेव ने बड़े महोत्सव के साथ गजसुकुमार का अभिनिष्क्रमण (दीक्षा) महोत्सव मनाया। हजारों पुरुषों द्वारा उठाई जाने वाली शिविका पर बिठलाकर गजसुकुमाल को दीक्षा हेतु ले जाया गया। माता-पिता ने भगवान अरिष्टनेमि के समक्ष पहुंचकर भगवान को शिष्य की भिक्षा प्रदान की। वेश परिवर्तन के पश्चात् गजसुकुमाल भगवान के समक्ष उपस्थित हुए

एवं प्रव्रज्या प्रदान करने हेतु निवेदन किया। भगवान ने गजसुकुमाल कुमार को प्रव्रजित किया, मुंडित किया एवं संयम हेतु शिक्षित किया।

तब वे गजसुकुमाल अनगार बन गए व ईर्यादि पांच समितियों से युक्त होकर यावत् ब्रह्मचर्य की गुप्ति के साथ इसी निर्ग्रन्थ प्रवचन को सम्मुख रखते हुए विचरण करते हैं।

महाकाल श्मशान में प्रतिमा स्वीकार

44. तए णं से गयसुकुमाले अणगारे जं चेव दिवसं पव्वइए तस्सेव दिवसस्स पुव्वावरण्हकालसमयंसि जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-

इच्छामि णं भंते! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे महाकालंसि सुसाणंसि एगराइयं महापडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए।

अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह।

तए णं से गयसुकुमाले अणगारे अरहया अरिट्ठणेमिणा अब्भणुण्णाए समाणे। अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए सहसंबवणाओ उज्जाणाओ पडिणिक्खमइ पडिणिक्खमित्ता जेणेव महाकाले सुसाणे तेणेव उवागच्छइ-उवागच्छित्ता थंडिल्लं पडिलेहेइ पडिलेहित्ता उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ पडिलेहित्ता ईसिं पब्भारगएणं काएणं जाव दो वि पाए साहट्टु एगराइयं महापडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ।

वे गजसुकुमाल अनगार जिस दिन दीक्षित हुए, उसी दिन के लगभग तीसरे प्रहर में जहाँ अर्हन्त अरिष्टनेमि थे, वहाँ आते हैं,

आकर अर्हन्त अरिष्टनेमि को तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिणा करते हैं। करके वन्दन नमस्कार करते हैं, वन्दन नमस्कार करके इस प्रकार निवेदन किया-

भंते! आपकी अनुज्ञा प्राप्त होने पर मैं महाकाल श्मशान में एक रात्रि की महाप्रतिमा (प्रतिज्ञा विशेष) को स्वीकार करके विचरण करना चाहता हूं।

''देवानुप्रियो! जिससे सुख हो। प्रतिबंध (आसक्ति) मत करना। फिर वे गजसुकुमाल अणगार अर्हन्त अरिष्टनेमि के द्वारा अनुज्ञात होने पर अर्हन्त अरिष्टनेमि को वन्दन नमस्कार करते हैं। वन्दन नमस्कार करके अर्हन्त अरिष्टनेमि के पास से सहस्राम्रवन उद्यान से बाहर निकलते हैं। निकलकर जहाँ महाकाल श्मशान था, वहाँ आते हैं, स्थण्डिल भूमि (जहाँ स्थित रहकर प्रतिमा ग्रहण करनी थी उस भूमि) की प्रतिलेखना करते हैं, प्रतिलेखना करके उच्चार-प्रस्रवण (मल मूत्र) के परिष्ठापन योग्य भूमि की प्रतिलेखना करते हैं, प्रतिलेखना करके मुंह को कुछ झुकाकर, भुजाओं को लम्बी करके, अपलक नेत्रों से पुद्गल विशेष पर दृष्टि रोककर, दोनों पैरों को साथ मिलाकर एक रात्रि की महाप्रतिमा को स्वीकार करके विचरण करते हैं।

सोमिल का उपसर्ग-गजसुकुमाल मुनि की अडोलता

45. **इमं च णं सोमिले महाणे सामिधेयस्स अट्ठाए बारवईए णयरीओ बहिया पुव्वणिग्गए। समिहाओ य दब्भे य कुसे य पत्तामोडं य गेण्हइ गेण्हित्ता तओ पडिणियत्तइ पडिणिवत्तित्ता महाकालस्स सुसाणस्स अदूरसामंतेणं वीईवयमाणे-वीईवयमाणे संझाकालसमयंसि**

पविरलमणुस्संसि गयसुकुमालं अणगारं पासइ पासित्ता तं वेरं सरइ सरित्ता आसुरुत्ते रुट्ठे कुविए चंडिक्किए मिसिमिसेमाणे एवं वयासी-

एस णं भो! से गयसुकुमाले कुमारे अपत्थिय जाव परिवज्जिए, जे णं मम धूयं सोमसिरीए भारियाए अत्तयं सोमं दारियं अदिट्ठदोसपइयं कालवत्तिणिं विप्पजहित्ता मुण्डे जाव पव्वइए। तं सेयं खलु मम गयसुकुमालस्स कुमारस्स वेरनिज्जायणं करित्तए, एवं संपेहेइ संपेहित्ता दिसापडिलेहणं करेइ करित्ता सरसं मट्ठियं गेण्हइ गेण्हित्ता जेणेव गयसुकुमाले अणगारे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता गयसुकुमालस्स अणगारस्स मत्थए मट्ठियाए पालं बंधइ बंधित्ता जलंतीओ चिययाओ, फुल्लियकिंसुयसमाणे खइरंगारे कहल्लेणं गिण्हइ गिण्हित्ता गयसुकुमालस्स अणगारस्स मत्थए पक्खिवइ पक्खिवित्ता भीए तसिए उव्विगे संजायभए तओ खिप्पामेव अवक्कमइ अवक्कमित्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए।

तए णं तस्स गयसुकुमालस्स अणगारस्स सरीरयंसि वेयणा पाउब्भूया-उज्जला जाव दुरहियासा। तए णं से गयसुकुमाले अणगारे सामिलस्स माहणस्स मणसा वि अप्पदुस्समाणे तं उज्जलं जाव दुरहियासं वेयणं अहियासेइ।

इधर सोमिल ब्राह्मण हवन की सामग्री के लिए पहले से ही द्वारिका नगरी के बाहर निकला हुआ था, वह ईंधन हेतु लकड़ियों को दर्भ (जड़ सहित दर्भ) कुश (दर्भ के अग्रभाग) को तथा देवपूजा के लिए वृक्ष से तोड़े गए पत्तों को ग्रहण करता है। ग्रहण करके वहाँ से लौटता है, लौटकर महाकाल श्मशान के न अधिक दूर, न अधिक पास गमन करते हुए सन्ध्या के वक्त, जब मनुष्यों का आवागमन कम था, गजसुकुमाल अनगार को देखता है, देखकर उस वैर का स्मरण

करता है, स्मरण करके क्रुद्ध, रुष्ट, कुपित, चण्ड होकर क्रोध में जलते हुए इस प्रकार (मन ही मन) कहने लगा-

अरे! यही वह श्रीहीन, निर्लज्ज, मृत्युकामी, हीनपुण्य चतुर्दशी को जन्मा हुआ गजसुकुमाल कुमार है, जिसने मेरी पुत्री सोमश्री भार्या की आत्मजा सोमा कन्या जिसका कोई चोरी आदि दोष नहीं देखा गया, जो जाति आदि से बहिष्कृत नहीं है, यौवन रूपी भोग योग्य काल में रही हुई है, उसे छोड़कर मुण्डित होकर अनगार धर्म में प्रव्रजित हो गया है। अतः मेरे लिए यह श्रेयस्कर है कि मैं गजसुकुमाल कुमार से वैर का बदला लूं। इस प्रकार विचार करता है, विचार करके चारों दिशाओं में देखता है। देखकर गीली मिट्टी को ग्रहण करता है, ग्रहण करके जहाँ गजसुकुमाल अनगार थे, वहाँ आता है, आकर गजसुकुमाल अनगार के मस्तक पर मिट्टी से पाल बांधता है। पाल बांधकर जलती हुई चिता से खिले हुए पलाश के फूल के समान लाल-लाल खैर की लकड़ी के अंगारों को ठीकरी से उठाता है, उठाकर गजसुकुमार अनगार के मस्तक पर डाल देता है। डालकर भयभीत होकर त्रस्त होकर, उद्विग्न होकर, डरकर वहाँ से शीघ्र ही हट जाता है, हटकर जिस दिशा से आया था, उसी दिशा में लौट गया।

तब उन गजसुकुमाल अनगार के शरीर में जलती हुई विपुल, तीव्र, चण्ड, प्रगाढ़, कड़वी, कर्कश, कठिनाई से सही जाए ऐसी वेदना उत्पन्न हो गई फिर भी वे गजसुकुमाल अनगार सोमिल ब्राह्मण के प्रति मन से भी प्रद्वेष न करते हुए उस दाह पैदा करने वाली यावत् दुःसह वेदना को सहन करते हैं।

गजसुकुमाल अनगार की मुक्ति

46. **तए णं तस्स गयसुकुमालस्स अणगारस्स तं उज्जलं जाव दुरहियासं वेयणं अहियासेमाणस्स सुभेणं परिणामेणं पसत्थज्झवसाणेणं तयावरणिज्जाणं कम्माणं खएणं कम्मरयं विकिरणकरं अपुव्वकरणं अणुप्पविट्ठस्स अणंते अणुत्तरे जाव केवलवरणाणदंसणे समुप्पण्णे। तओ पच्छा सिद्धे जाव सव्व दुक्खप्पहीणे तत्थ णं अहासंनिहिएहिं देवेहिं सम्मं आराहिए त्ति कट्टु दिव्वे सुरभिगंधोदए वुट्ठे, दसद्धवण्णेकुसुमे निवाडिए, चेलुक्खेवे कए, दिव्वे य गीयगंधव्व-णिणाए कए यावि होत्था।**

उस दाहकारी यावत् दुःसह वेदना को समभाव से सहन करते हुए कर्मरज को दूर करने वाले अपूर्वकरण (अष्टमगुणस्थान) में प्रविष्ट हो चुके उन गजसुकुमाल अनगार को शुभ परिणाम से, प्रशस्त अध्यवसाय से ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय आदि कर्मों का क्षय हो जाने से अनंत, अनुत्तर, व्याघातरहित, निरावरण, सम्पूर्ण लोकालोक को प्रकाशित करने वाला श्रेष्ठ केवल ज्ञान एवं केवल दर्शन प्रकट हो गया। तत्पश्चात् वे सिद्ध, बुद्ध, मुक्त एवं परिनिर्वाण को प्राप्त हुए और सभी दुःखों का अन्त करने वाले हो गए। गजसुकुमाल अनगार ने सम्यक् आराधना कर ली है ऐसा जानकर समीपस्थ देवों ने सुगंधित जल की वृष्टि की। पांच रंगों के पुष्पों को बरसाया, वस्त्र को फहराया और मृदंगादि के नाद सहित दिव्य गीतों को गाया।

श्रीकृष्ण द्वारा वृद्ध की सहायता

47. **तए णं से कण्हे वासुदेवे कल्लं पाउप्पभायाए जाव जंलते ण्हाए जाव विभूसिए हत्थिखंधवरगए सकोरंटमल्ल दामेणं छत्तेणं**

धरिज्जमाणेणं सेयवरचामराहिं उद्धुव्वमाणीहिं महयाभड-चडगर-पहकरवंद-परिक्खित्ते बारवइं णयरिं मज्झं मज्झेणं जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

तए णं से कण्हे वासुदेवे बारवईए णयरीए मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छमाणे एक्कं पुरिसं जुण्णं जराजज्जरियं-देहं जाव किलंतं महइ महालयाओ इट्टगरासीओ एगमेगं इट्टगं गहाय बहिया रत्थापहाओ अंतोगिहं अणुप्पविसमाणं पासइ।

तए णं से कण्हे वासुदेवे तस्स पुरिस्स अणुकंपणट्ठाए हत्थिखंधवरगए चेव एगं इट्टगं गिण्हइ गिण्हित्ता बहिया रत्थापहाओ अंतोघरंसि अणुप्पवेसेइ।

तए णं कण्हेणं वासुदेवेणं एगाए इट्टगाए-गहियाए समाणीए अणेगेहिं पुरिससएहिं से महालए इट्टगस्सरासी बहिया रत्थापहाओ अंतोघरंसि अणुप्पवेसिए।

फिर अगले दिन प्रातःकाल सूर्योदय हो जाने पर वे कृष्ण वासुदेव स्नानादि करके सभी अलंकारों से शोभायमान होकर हाथी के स्कन्ध पर आरूढ़ होकर, कोरण्ट फूलों की माला से युक्त छत्र को धारण किए हुए, श्वेत चामरों के ढुलाए जाते हुए, योद्धाओं के विस्तृत समुदाय से घिरे हुए द्वारिका नगरी के मध्य से जहाँ अर्हनत अरिष्टनेमि थे, वहाँ जाने का निश्चय किया।

तब वे कृष्ण वासुदेव द्वारिका नगरी के मध्य से निकलते वक्त एक वृद्ध, जरा से जर्जरित शरीर वाले रुग्ण, भूखे, प्यासे, दुर्बल, थके हुए पुरुष को मार्ग पर बाहर रहे हुए बहुत बड़े ईंटों के ढेर से एक-एक ईंट लेकर घर के अंदर प्रवेश करते देखते हैं।

तदनन्तर वे कृष्ण वासुदेव उस पुरुष की अनुकम्पा के लिए हाथी के स्कन्ध पर बैठे-बैठे ही एक ईंट लेते हैं, लेकर बाहर के मार्ग से घर के अंदर रख देते हैं।

कृष्ण वासुदेव के द्वारा ईंट को ले जाए जाने पर सैकड़ों पुरुषों ने उस विशाल ईंट के ढेर को बाहर के मार्ग से घर के अंदर पहुंचा दिया।

गजसुकुमाल अनगार के दर्शनाभिलाषी श्रीकृष्ण

48. **तए णं से कण्हे वासुदेवे बारवईए णयरीए मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ णिग्गच्छित्ता जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव उवागए उवागच्छिता जाव वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता गयसुकुमालं अणगारं अपासमाणे एवं अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-**

कहि णं भंते से मम सहोदरे कणीयसे भाया गयसुकुमाले अणगारे जं णं वंदामि णमंसामि?

फिर वे कृष्ण वासुदेव द्वारिका नगरी के मध्य से निकलते हैं, निकलकर जहाँ अर्हन्त अरिष्टनेमि थे, वहाँ आते हैं, आकर अर्हन्त अरिष्टनेमि को वन्दन नमस्कार करते हैं, वन्दन नमस्कार करके गजसुकुमाल अनगार के नहीं दिखने पर अर्हन्त अरिष्टनेमि को वन्दन नमस्कार करते हैं, वन्दन नमस्कार करके इस प्रकार कहने लगे-

'भंते। वह मेरा सहोदर छोटा भाई गजसुकुमाल अनगार कहाँ है? मैं उन्हें वन्दन नमस्कार करना चाहता हूं।'

अर्हन्त अरिष्टनेमि द्वारा श्रीकृष्ण को समझाइश

49. तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी-साहिए णं कण्हा! गयसुकुमालेणं अणगारेणं अप्पणो अट्ठे। तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं एवं वयासी-कहण्णं भंते! गयसुकुमालेणं अणगारेणं साहिए अप्पणो अट्ठे?

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी-एवं खलु कण्हा गयसुकुमारेणं अणगारे मम कल्लं पुव्वावरण्हकालसमयंसि वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-इच्छामि णं जाव उवसंपज्जित्ता णं विहरइ।

तए णं तं गयसुकुमालं अणगारं एगे पुरिसे पासइ पासित्ता आसुरुत्ते जाव सिद्धे। तं एवं खलु कण्हा! गयसुकुमालेणं अणगारेणं साहिए अप्पणो अट्ठे।

तब अर्हन्त अरिष्टनेमि कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार फरमाने लगे।

कृष्ण! गजसुकुमाल अनगार ने अपने प्रयोजन को सिद्ध कर लिया है। फिर वे कृष्ण वासुदेव अर्हन्त अरिष्टनेमि को इस प्रकार कहने लगे- भंते! गजसुकुमाल अनगार ने अपने प्रयोजन को किस प्रकार सिद्ध कर लिया?

अर्हन्त अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार कहा- कृष्ण! ऐसा है कि गजसुकुमाल अनगार ने कल लगभग दिन के तीसरे प्रहर में मुझे वन्दन नमस्कार करके निवेदन किया- भंते! आपकी अनुमति मिलने पर मैं महाकाल श्मशान में एक रात्रि की महाप्रतिमा स्वीकार करके विचरना चाहता हूं।

अनुज्ञा मिलने पर वे गजसुकुमाल अनगार महाप्रतिमा स्वीकार करते हैं। उन गजसुकुमाल अनगार को एक पुरुष देखता है, देखकर क्रुद्ध हुआ यावत् गजसुकुमाल अनगार वेदना को सहन करते हुए सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हो गए। कृष्ण! इस प्रकार गजसुकुमाल अनगार ने अपने प्रयोजन को सिद्ध कर लिया है।

श्रीकृष्ण द्वारा पृच्छा एवं प्रभु द्वारा समाधान

50. तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं एवं वयासी-

से के णं भंते! से पुरिसे अपत्थिए-पत्थिए जाव परिवज्जिए जे णं ममं सहोदरं कणीयसं भायरं गयसुकुमालं अणगारं अकाले चेव जीवियाओ ववरोविए।

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी मा णं कण्हा! तुमं तस्स पुरिसस्स पदोसमावज्जाहि! एवं खलु कण्हा! तेणं पुरिसेणं गयसुकुमालस्स अणगारस्स साहिज्जे दिण्णे।

कहण्णं भंते! तेणं पुरिसेणं गयसुकुमालस्स अणगारस्स साहिज्जे दिण्णे?

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी-से नूणं कण्हा! तुमं ममं पायवंदए हव्वमागच्छमाणे बारवईए णयरीए एगं पुरिसं जाव अणुपवेसिए।

जहा णं कण्हा! तुम्मं तस्सपुरिसस्स साहिज्जे दिण्णे एवामेव कण्हा! तेणं पुरिसेणं गयसुकुमालस्स अणगारस्स अणेगभव-सयसहस्स-संचियं कम्मं उदीरेमाणेणं बहुकम्मणिज्जरत्थं साहिज्जे दिण्णे।

तब वे कृष्ण वासुदेव अर्हन्त अरिष्टनेमि को इस प्रकार कहते हैं-

भंते! वह मृत्यु की कामना करने वाला, निर्लज्ज, शोभाहीन, कुलक्षण वाला, हीन पुण्य वाला पुरुष कौन है, जिसने मेरे सहोदर छोटे भाई गजसुकुमाल अनगार को अकाल में ही जीवन से रहित कर दिया।

तब अर्हन्त अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव को यह कहा-कृष्ण! तुम उस पुरुष के प्रति प्रद्वेष मत लाओ। कृष्ण! उस पुरुष ने गजसुकुमाल अनगार को सहायता प्रदान की है।

कृष्ण वासुदेव ने पूछा- ''भंते! उस पुरुष ने गजसुकुमाल अनगार को किस प्रकार सहायता दी।''

अर्हन्त अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव को कहा-कृष्ण! निश्चय ही मेरी चरण वंदना के लिए आते हुए तुमने एक वृद्ध पुरुष को देखा था यावत् उसकी अनुकम्पा के लिए एक ईंट को घर के अंदर रखा था जिसके फलस्वरूप सैकड़ों पुरुषों ने ईंट की विशाल राशि घर के अंदर पहुंचा दी थी।

कृष्ण! जिस प्रकार तुमने उस पुरुष को सहायता दी थी, उसी प्रकार उस पुरुष ने गजसुकुमाल अनगार के लाखों भवों में संचित कर्मों की उदीरणा कराते हुए बहुत कर्मों की निर्जरा के लिए सहायता प्रदान की।''

51. तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं एवं वयासी- से णं भंते। पुरिसे मए कहं जाणियव्वे?

तए णं अरहा अरिट्ठणेमिं कण्हं वासुदेवं एवं वयासी- जेणं कण्हा! तुमं बारवईए णयरीए अणुप्पविसमाणं पासेत्ता ठियए चेव ठिइभेएणं कालं करिस्सइ तए णं तुमं जाणिज्जासि 'एस णं से पुरिसे'।

तए णं से कण्हे वासुदेव अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ,

वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव आभिसेयं हत्थिरयणं तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता हत्थिं दुरूहइ दुरूहित्ता जेणेव बारवई णयरी जेणेव सए गिहे तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

तए णं तस्स सोमिलमाहणस्स कल्लं जाव जलंते अयमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पणे-एवं खलु कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं पायवंदए णिग्गए। तं णायमेयं अरहया विण्णायमेयं अरहया सुयमेयं अरहया, सिट्ठमेयं अरहया भविस्सई कण्हस्स वासुदेवस्स। तं न णज्जई णं कण्हे वासुदेवे ममं केणवि कुमारेणं मारिस्सइ त्ति कट्टु भीए तत्थे तसिए उव्विग्गे संजायभए समायो गिहाओ पडिणिक्खमई। कण्हस्स वासुदेवस्स बारवइं णयरिं अणुप्पविसमाणस्स पुरओ सपक्खिं सपडिदिसिं हव्वमागए।

तब उन कृष्ण वासुदेव ने अर्हन्त अरिष्टनेमि को इस प्रकार कहा- 'भंते! वह पुरुष मेरे द्वारा कैसे जाना जा सकता है?'

अर्हन्त अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार फरमाया-

कृष्ण! द्वारिका नगरी में प्रवेश करते हुए तुम्हें देखकर जो पुरुष खड़ा-खड़ा ही आयुष्य का क्षय हो जाने से मृत्यु को प्राप्त हो जाए तो तुम जान सकते हो कि यही वह पुरुष है।

फिर वे कृष्ण वासुदेव अर्हन्त अरिष्टनेमि को वन्दन नमस्कार करते हैं, वन्दन नमस्कार करके जहाँ प्रधान हस्तिरत्न था, वहाँ आते हैं आकर हस्ती पर आरूढ़ होते हैं, आरूढ़ होकर जहाँ द्वारिका नगरी थी, जहाँ अपना महल था वहाँ जाने का निश्चय करते हैं।

सोमिल ब्राह्मण का चिन्तन

अगले दिन सूर्योदय हो जाने पर उस सोमिल ब्राह्मण के इस

प्रकार का अध्यवसाय, चिन्तन, प्रार्थित, मनोगत, संकल्प उत्पन्न हुआ-निश्चय ही कृष्ण वासुदेव अर्हन्त अरिष्टनेमि की चरण वंदना के लिए निकले हैं। अर्हन्त भगवन्त द्वारा कृष्ण वासुदेव को गजसुकुमाल के मरण का ज्ञात हो गया होगा, विज्ञात हो गया होगा कि सोमिल ने किस अभिप्राय से ऐसा किया है, यह विषय समृति में आ गया होगा, यह बात बता दी गई होगी। अतः न जाने कृष्ण वासुदेव मुझे किस बुरी मार से मारेंगे। ऐसा विचार करके वह सोमिल भयभीत हुआ, त्रस्त हुआ, उद्विग्न हुआ एवं डर के उत्पन्न हो जाने से अपने घर से निकलता है। कृष्ण वासुदेव के द्वारिका नगरी में प्रवेश करते समय वह सोमिल उनके समक्ष ठीक आमने-सामने हो गया।

सोमिल की मृत्यु व कृष्ण वासुदेव का रोष

52. तए णं से सोमिल माहणे कण्हं वासुदेवं सहसा पासेत्ता भीए तत्थे तसिए उव्विग्गे संजायभए ठियए चेव ठिइभेएणं कालं करेइ करित्ता, धरणितलंसि सव्वंगेहिं 'धस' त्ति सिण्णिवडिए। तए णं से कण्हे वासुदेवे सोमिलं माहणं पासई पासित्ता एवं वयासी-

'एस णं भो देवाणुप्पिया! से सोमिले माहणे अपत्थिय-पत्थिए जाव परिवज्जिए जेणं ममं सहोयरे कणीयसे भायरे गजसुकुमाले अणगारे अकाले चेव जीवियाओ ववरोविए त्ति कट्टु सोमिलं माहणं पाणेहिं कड्ढावेइ कड्ढावित्ता तं भूमिं पाणिएणं अब्भोक्खावेइ अब्भोक्खावेत्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवागए। सयं गिहं अणुप्पविट्ठे।'

उस समय सोमिल ब्राह्मण कृष्ण वासुदेव को अचानक देखकर भयभीत, त्रस्त, उद्विग्न होते हुए डर के उत्पन्न हो जाने से खड़े-खड़े ही आयु का क्षय हो जाने से मृत्यु को प्राप्त होता है एवं काल करके

सम्पूर्ण शरीर के साथ पृथ्वीतल पर 'धस' करके गिर पड़ा। कृष्ण वासुदेव सोमिल ब्राह्मण को देखते हैं एवं देखकर कहने लगे -

'देवानुप्रियो! यही वह मृत्यु की कामना करने वाला, लज्जा व शोभा से रहित, कुलक्षणी, हीनपुण्य सोमिल ब्राह्मण है जिसने मेरे सहोदर भाई गजसुकुमाल अनगार को अकाल में ही जीवन से रहित कर दिया'। ऐसा कहकर वे कृष्ण वासुदेव चाण्डालों द्वारा सोमिल ब्राह्मण को बाहर निकलवाते हैं, निकलवाकर उस भूमि पर जल का छिड़काव करवाया, छिड़काव करवाकर जहाँ अपना महल था, वहाँ आए तथा अपने महल में अनुप्रविष्ट हुए।

53. **एवं खलु जंबु! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स अट्ठमज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते।**

जम्बू! इस प्रकार सिद्ध गति को संप्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के तीसरे वर्ग के आठवें अध्ययन का यह अर्थ फरमाया था।

9 वां अध्याय

उक्खेवओ

54. **एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए णयरीए कण्हे णामं वासुदेवे राया जहा पढमाए जाव विहरइ। तत्थ णं बारवईए णयरीए बलदेवे णामं राया होत्था वण्णओ। तस्स णं बलदेवस्स रण्णो धारिणी णामं देवी होत्था। वण्णओ। तए णं सा धारिणी देवी सीहं सुमिणे जहा गोयमे णवरं सुमुहे णामं कुमारे पण्णासं कण्णाओ पण्णासं दाओ, चोद्दस पुव्वाइं, अहिज्जइ वीसं वासाइं परियाओ। सेसं तं चेव सेत्तुंजे सिद्धे णिक्खेवओ।**

एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स नवमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते। त्ति बेमि।

नवें अध्ययन का उत्क्षेप अर्थात् भूमिका की जम्बू स्वामी ने जिज्ञासा व्यक्त की एवं सुधर्मा स्वामी ने फरमाया।

जम्बू! उस काल उस समय में द्वारिका नगरी में कृष्ण वासुदेव नामक राजा राज्य करते थे, आदि वर्णन प्रथम वर्ग के प्रथम अध्ययन के समान जानना चाहिए। उस द्वारिका नगरी में बलदेव राजा निवास करते थे। उन बलदेव राजा के धारिणी नामक महारानी थी। फिर वह धारिणी महारानी सिंह का स्वप्न देखकर जाग्रत हुई आदि सारा वर्णन पूर्ववर्णित गौतम कुमार के समान जान लेना चाहिए। विशेष बात यह है कि बालक का नाम सुमुख रखा गया। यौवनावस्था में पचास कन्याओं के साथ उसका विवाह हुआ। पचास स्त्रियों के लिए बलदेव राजा ने सुमुख को विभिन्न पदार्थ पचास-पचास की संख्या में दिए।

यथासमय सुमुख कुमार ने दीक्षा ग्रहण की। चौदह पूर्वों का अध्ययन करते हैं, बीस वर्ष की दीक्षा पर्याय का पालन किया। शेष वर्णन पूर्ववत् जान लेना चाहिए। यावत् शत्रुंजय पर्वत पर संलेखना संथारा करके सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुए।

जम्बू! इस प्रकार सिद्ध गति को संप्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के तीसरे वर्ग के नवें अध्ययन का यह अर्थ फरमाया था।

* * *

10-13 अध्ययन

55. **एवं दुम्मुहे वि। कूवदारए वि तिण्णि वि बलदेव धारिणी सुया।**

दारुए वि एवं चेव, णवरं-वसुदेव धारिणी सुए।

एव अणादिट्ठी वि वसुदेव धारिणी सुए। एवं खलु जंबू!

समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स तेरसमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते।

।।तइओ वग्गो सम्मत्तो।।

इसी प्रकार द्विमुख कुमार एवं कूपदारक कुमार का वर्णन भी जान लेना चाहिए। सुमुख, द्विमुख एवं कूपदारक ये तीनों बलदेव एवं धारिणी के पुत्र थे।

दारुक कुमार का वर्णन भी इसी प्रकार है। अन्तर इतना है कि उनके पिता वसुदेव व माता धारिणी थी।

अनादृष्टि का वर्णन भी पूर्वोत्तर प्रकार का है। वे भी वसुदेव और धारिणी के पुत्र थे।

जम्बू! इस प्रकार सिद्ध गति को संप्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतडदशा के तीसरे वर्ग के तेहरवें अध्ययन का यह अर्थ फरमाया था।

।।तृतीय वर्ग समाप्त।।

चउत्थो वग्गो-चतुर्थ वर्ग

1-10 अध्ययन

56. **'जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं तच्चस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, चउत्थस्स वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते!'**

'एवं खुल जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं चउत्थस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता तं जहा-

1. जालि 2. मयालि 3. उवयालि 4. पुरिससेणे 5. वारिसेणे य।

6. पज्जुण्ण 7. संब 8. अणिरुद्ध 9. सच्चणेमि य 10. दढणेमि।।1।।'

'जइ णं भत्ते! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं चउत्थस्स वगस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता पढमस्स णं भंते अज्झयणस्स समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते?'

''भंते। यदि सिद्ध गति को संप्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने तीसरे वर्ग का यह अर्थ फरमाया था तो सिद्धावस्था को प्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने अंतगडदशा के चौथे वर्ग का क्या अर्थ प्ररूपित किया था?''

''जम्बू! वह इस प्रकार है - सिद्ध गति को संप्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने चौथे वर्ग के दस अध्ययन बतलाए थे यथा- 1. जालि, 2. मयालि, 3. उवयालि, 4. पुरुषसेन, 5. वारिषेण, प्रद्युम्न, 7. शाम्ब, 8. अनिरुद्ध, 9. सत्यनेमि और 10. दृढ़नेमि।।1।।'

'भंते! यदि सिद्धिप्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने चौथे वर्ग के दस अध्ययन फरमाए थे तो भंते! सिद्धिप्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने प्रथम अध्ययन का क्या अर्थ निरूपित किया था?

57. एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवई णामं णयरी होत्था। तीसे णं बारवईए णयरीए जहा पढमे जाव कण्हे वासुदेवे आहेवच्चं जाव विहरइ। तत्थ णं बारवईए णयरीए वसुदेवे राया। धारिणी देवी वण्णओ। जहा गोयमो णवरं जालिकुमारे। पण्णासओ दाओ। वारसंगी। सोलसवासा परियाओ। सेसं जहा गोयमस्स जाव सेत्तुंजे सिद्धे।

एवं मयालि उवयालि पुरिससेणे य वारिसेणे य।

एवं पज्जुण्णे वि णवरं - कण्हे पिया, रूप्पिणी माया।

एवं संबे वि णवरं जंबवई माया।

एवं अणिरुद्धे वि णवरं पज्जुण्णे पिया वेदब्भी माया।

एवं सच्चणेमी, णवरं समुद्दविजए पिया सिवा माया।

एवं दढणेमी, वि सव्वे एगगमा।

एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं चउत्थस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते।

।।चउत्थो वग्गो सम्मत्तो।।

जम्बू! उस काल उस समय में द्वारिका नामक नगरी थी। उस द्वारिका नगरी में कृष्ण वासुदेव अधिपत्य कर रहे थे। उस द्वारिका नगरी में वसुदेव राजा निवास करते थे। उनकी धारिणी नामक महारानी थी। उसने सिंह का स्वप्न देखा यावत् गौतम कुमार के वर्णन के समान सारी स्थितियां बनी। अन्तर इतना है कि बालक का नाम जालि कुमार

रखा गया। युवावस्था प्रकट हो जाने पर पचास कन्याओं के साथ पाणिग्रहण हुआ। यथासमय तीर्थंकर प्रभु अरिष्टनेमि का नगर के बाहर उद्यान में पदार्पण हुआ। जालि कुमार भी प्रभु की पर्युपासना हेतु पहुंचे। देशना श्रवण करके दीक्षा ग्रहण करने की भावना जागृत हुई। माता-पिता से अनुमति प्राप्त करके प्रभु के चरणों में दीक्षित हुए। बारह अंगों का अध्ययन किया। सोलह वर्षों तक दीक्षा पर्याय का पालन किया। बारह भिक्षु प्रतिमाओं एवं गुणरत्न संवत्सर तप की आराधना करके अवसर आ जाने पर शत्रुंजय पर्वत पर संथारा करके सिद्ध, बुद्ध हुए, परिनिर्वाण को प्राप्त किया एवं सभी दु:खों का अन्त कर दिया।

इसी प्रकार मयालि, उवयालि, पुरुषसेन और वारिषेण का वर्णन कह देना चाहिए।

प्रद्युम्न कुमार का वर्णन भी इसी प्रकार है। विशेषता यह है कि पिता कृष्ण वासुदेव एवं माता रुक्मिणी थी।

शाम्ब कुमार का वर्णन भी प्रद्युम्न कुमार के तुल्य है। विशेषता यह है कि माता का नाम जाम्बवती था।

अनिरुद्ध कुमार का वर्णन भी पूर्ववत् है। अंतर यह है कि उनके पिता का नाम प्रद्युम्न तथा माता का नाम वैदर्भी था।

इसी प्रकार सत्यनेमि का वर्णन है जिनके पिता समुद्रविजय एवं माता शिवा थी। दृढ़नेमि का सम्पूर्ण वर्णन सत्यनेमि के समान है। उपर्युक्त सभी अध्ययनों का स्वरूप एक समान है।

जंबू! इस प्रकार श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के चतुर्थ वर्ग का यह अर्थ फरमाया था।

।। चतुर्थ वर्ग समाप्त।।

पंचमो वग्गो-पंचम वर्ग

पद्मावती नामक प्रथम अध्ययन

58. **जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं चउत्थस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते पंचमस्स णं भंते। वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते?**

एवं खलु जंबू समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं पंचमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता तं जहा-

1. पउमावईय 2. गोरी 3. गंधारी 4. लक्खणा 5. सुसीमा य।

6. जंबवई 7. सच्चभामा 8. रूप्पिणी 9. मूलसिरी 10. मूलदत्ता य।।

जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं पंचमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता पढमस्स णं भंते अज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते।

एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवई णामं णयरी होत्था। जहा पढमे जाव कण्हे वासुदेवे आहेवच्चं जाव विहरइ। तस्स णं कण्हस्स वासुदेवस्स पउमावई णामं देवी होत्था वण्णओ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठणेमि समोसढे जाव विहरइ। कण्हे वासुदेवे णिग्गए जाव पज्जुवासइ। तए णं सा पउमावई देवी इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणी हट्ठतुट्ठा जहा देवई देवी जाव पज्जुवासई। तए णं अरहा अरिट्ठणेमि कण्हस्स वासुदेवस्स पउमावई देवीए जाव धम्मकहा परिसा पडिगया।

भंते! यदि सिद्ध गति को प्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने चतुर्थ वर्ग का यह अर्थ फरमाया था तो भंते! अंतगडदशा के पांचवें वर्ग का श्रमण भगवान महावीर ने क्या अर्थ प्ररूपित किया था?

जम्बू! सिद्ध गति को प्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने पांचवें

वर्ग के दस अध्ययन फरमाए थे। वे इस प्रकार हैं - 1. पद्मावती, 2. गौरी, 3. गान्धारी, 4. लक्षणा, 5. सुसीमा, 6. जाम्बवती, 7. सत्यभामा 8. रुक्मिणी 9. मूल श्री और 10. मूलदत्ता।

भंते! यदि मुक्ति को प्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने पांचवें वर्ग के दस अध्ययन फरमाए थे, तो भंते! श्रमण भगवान महावीर ने प्रथम अध्ययन का क्या अर्थ फरमाया था?

जम्बू! वह इस प्रकार है- उस काल उस समय में द्वारिका नामक नगरी थी। वहाँ कृष्ण वासुदेव आधिपत्य करते हुए विचरते थे। उन कृष्ण वासुदेव के पद्मावती नामक महारानी थी। वह सुकुमाल हाथ पैर वाली थी। यावत् अनेक लक्षणों से सम्पन्न थी।

उस काल उस समय में अर्हन्त अरिष्टनेमि द्वारिका नगरी के बाहर नन्दनवन उद्यान में पधारे। कृष्ण वासुदेव प्रभु के दर्शन वन्दनादि हेतु निकले यावत् भगवान की पर्युपासना करने लगे तदनन्तर पद्मावती महारानी भी यह बात ज्ञान होने पर हृष्ट तुष्ट हुई तथा जैसे देवकी महारानी भगवान के दर्शनादि हेतु पधारी थी, उसी प्रकार प्रभु के चरणों में उपस्थित हुई यावत् पर्युपासना करने लगी। तब अर्हन्त अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव, पद्मावती महारानी एवं उस विशाल परिषद् को धर्मकथा फरमाई। परिषद् धर्म देशना सुन कर लौट गई।

द्वारिका नगरी के नाश के कारण

59. तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी।

इमीसे णं भंते। बारवईए णयरीए दुवालस जोयणआयामाए नवजोयणवित्थिण्णाए जाव देवलोग भूयाए किं मूलए विणासे भविस्सइ?

कण्हाइ! अरहा अरिट्ठेणेमिं कण्हं वासुदेवं एवं वयासी एवं

खलु कण्हा! इमीसे बारवईए णयरीए दुवालस जोयणआयामाए णव-जोयणवित्थिण्णाए जाव देवलोगभूयाए सुरग्गिदीवायणमूलए विणासे भविस्सइ।

उस समय वे कृष्ण वासुदेव अर्हन्त अरिष्टनेमि को वन्दन नमस्कार करते हैं, नमस्कार करके इस प्रकार कहने लगे -

भंते! इस बारह योजन लम्बी, नौ योजन चौड़ी यावत् देवलोक के समान इस द्वारिका नगरी का विनाश किस कारण से होगा?

कृष्ण! इस प्रकार अर्हन्त अरिष्टनेमि कृष्ण वासुदेव को फरमाने लगे। निश्चित रूप से कृष्ण! इस बारह योजन लम्बी, नौ योजन चौड़ी यावत् देवलोक के समान द्वारिका नगरी का विनाश सुरा, अग्नि एवं द्वैपायन ऋषि के कारण होगा।

कृष्ण वासुदेव का अनुताप

60. **तए णं कण्हस्स वासुदेवस्स अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म अयं अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था - 'धण्णाणं ते जालि-मयालि-उवयालि-पुरिससेण- वारिसेण-पज्जुण्ण-संब-अणिरुद्ध-दढनेमि-सच्चणेमि-प्पभियओ कुमारा' जे णं चइत्ता हिरण्णं जाव परिभाइत्ता अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतियं मुंडा जाव पव्वइया।**

अहण्णं अधण्णे अकयपुण्णे रज्जे य जाव अंतेउरे य माणुस्सएसु य कामभोगेसु मुच्छिए गढिए गिद्धे अज्झोववण्णे णो संचाएमि अरहओ अरिट्ठणेमिस्स जाव पव्वइत्तए।

अर्हन्त अरिष्टनेमि के पास इस अर्थ को सुनकर एवं धारण करके कृष्ण वासुदेव के इस प्रकार का अध्यवसाय, चिन्तन, प्रार्थित,

मनोगत एवं संकल्प उत्पन्न हुआ- 'धन्य है वे जालि, मयालि, उवयालि, पुरुषसेन, वारिषेण, प्रद्युम्न, शाम्ब, अनिरुद्ध, ढ़ढ़नेमि, सत्यनेमि आदि कुमार जो सोना, चांदी, धन, धान्य आदि को त्याग कर, उन्हें वितरित करके मुण्डित यावत् दीक्षित हुए हैं।'

मैं अधन्य हूं, मैंने पुण्य नहीं कमाया है, मैं राज्य में, सेना में, भंडार में, यावत् अन्त:पुर में मूर्च्छित हूं, गृद्ध हूं, आसक्त हूं, अध्युपपन्न हूँ तथा अर्हन्त अरिष्टनेमि के समीप मुण्डित एवं प्रव्रजित नहीं हो पा रहा हूं।

कृष्ण वासुदेव को यथार्थ का निदर्शन

61. **कण्हाइ! अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी -**

'से नूणं कण्हा! तव अयं अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था - धण्णाणं ते जालिप्पभिइ - कुमारा जाव पव्वइया। से नूणं कण्हा! अयमट्ठे समट्ठे?' 'हंत्ता अत्थि।'

'तं णो खलु कण्हा। एयं भूयं वा भवं वा भविस्सइ वा जण्णं वासुदेवा चइत्ता हिरण्णं जाव पव्वइस्संति।'

'से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ ण एयं भूयं वा जाव पव्वइस्संति?'

'कण्हाइ! अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी -

'एवं खलु कण्हा! सव्वे वि य णं वासुदेवा पुव्वभवे णियाणकडा से एएणट्ठेणं कण्हा! एवं वुच्चइ न एयं भूयं जाव पव्वइस्संति।'

कृष्ण! अर्हन्त अरिष्टनेमि कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार फरमाने लगे-

कृष्ण! तुम्हें यह अध्यवसाय, चिन्तन, प्रार्थित, मनोगत,

संकल्प उत्पन्न हुआ- धन्य हैं वे जालि आदि कुमार जिन्होंने सोने, चांदी आदि का त्याग करके दीक्षा ग्रहण की है। मैं अधन्य हूँ यावत् प्रव्रजित नहीं हो रहा हूं। कृष्ण! क्या यह बात यथार्थ है? कृष्ण वासुदेव ने कहा- हां, यह बात यथार्थ है।

निश्चित रूप से कृष्ण! ऐसा हुआ नहीं, होता नहीं एवं होगा नहीं कि वासुदेव हिरण्य, सुवर्ण आदि का परित्याग करके दीक्षा ग्रहण कर लें।

'भंते! ऐसा किस कारण से कहा जाता है कि वासुदेव का दीक्षा लेना संभव नहीं?

'कृष्ण' अर्हन्त अरिष्टनेमि कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार कहने लगे-निश्चित ही कृष्ण! सभी वासुदेवों के पूर्व भव में निदान किया हुआ होता है। इस कारण से कृष्ण! ऐसा कहा जाता है कि वासुदेव न भूतकाल में दीक्षित हुए हैं, न वर्तमान में दीक्षित होते हैं तथा न भविष्य में दीक्षित होंगे।

कृष्ण वासुदेव के भविष्य का कथन

62. **तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठेणेमिं एवं वयासी - 'अहं णं भंते! इओ कालमासे कालं किच्चा कहिं गमिस्सामि? कहिं उववज्जिस्सामि?'**

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी - एवं खुल कण्हा। तुमं बारवईए णयरीए सुरग्गिदीवायणं - कोव - निदड्ढाए अम्मापिइणियगविप्पहूणे रामेण बलदेवेण सद्धिं दाहिणवेयालिं अभिमुहे जुहिट्ठिल्लपामोक्खाणं पंचण्हं पंडवाणं पंडुराय पुत्ताणं पासं पंडुमहुरं संपत्थिए कोसंबवणकाणणे णग्गोहवरपायवस्स अहे पुढविसिलापट्टए

पीयवत्थ- पच्छाइय सरीरे जराकुमारेणं तिक्खेणं कोदंडविप्पमुक्केणं उसुणा वामे पादे विद्धे समाणे कालमासे कालं किच्चा तच्चाए वालुयप्पभाए पुढवीए उज्जलिए नरए णेरइयत्ताए उववज्जिहिसि।

तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म ओहयमणसंकप्पे करतल - पल्हत्थमुहे अट्टझाणोवगए झियाइ।

तब वे कृष्ण वासुदेव अर्हन्त अरिष्टनेमि को इस प्रकार कहने लगे- 'भंते! यहां से मृत्यु के समय काल करके मैं कहाँ जाऊँगा? कहाँ उत्पन्न होऊंगा?

फिर अर्हन्त अरिष्टनेमि कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार कहने लगे- कृष्ण! सुरा, अग्नि और द्वैपायन ऋषि के कोप के कारण द्वारिका नगरी के जल जाने पर तुम माता-पिता और सम्बन्धियों से रहित होकर राम बलदेव के साथ दक्षिण समुद्र के तट के अभिमुख होकर पाण्डु राजा के पुत्र युधिष्ठिर आदि पांच पांडवों के पास पाण्डु मथुरा की ओर प्रस्थित होकर कौशाम्बवन उद्यान में श्रेष्ठ वटवृक्ष के नीचे पृथ्वीशिला रूपी पट्ट पर पीताम्बर (पीले वस्त्र) से शरीर ढँका होने पर जराकुमार के द्वारा धनुष से छोड़े गए तीक्ष्ण बाण से बाएं पैर के बिंध जाने पर मृत्यु के अवसर पर काल करके तीसरी बालुकाप्रभा नामक पृथ्वी में उत्पन्न होओगे।

तब वे कृष्ण वासुदेव अर्हन्त अरिष्टनेमि के पास इस विषय को सुनकर एवं हृदय में निश्चय करके मानसिक विचारों का उपघात हो जाने पर हथेली पर मुंह रखकर आर्तध्यान से युक्त होकर अपध्यान करने लग जाते हैं।

63. **कण्हाइ! अरहा अरिट्ठणेमि कण्हं वासुदेवं एवं वयासी**

- मा णं तुमं देवाणुप्पिया! ओहयमणसंकप्पे जाव झियाह। एवं खलु तुमं देवाणुप्पिया! तच्चाओ पुढवीओ उज्जलियाओ णरयाओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे आगमेसाए उस्सप्पिणीए पुंडेसु जणवएसु सयदुवारे णयरे बारसमे अममे णामं अरहा भविस्ससि। तत्थ तुमं बहूइं वासाइं केवलिपरियायं पाउणित्ता सिज्झिहिसि, बुज्झिहिसि मुच्चिहिसि परिणिव्वाहिसि सव्वदुक्खाणं अंतं करेहिसि।

तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठे, अप्फोडेइ अप्फोडित्ता वग्गइ वग्गित्ता तिवइं छिंदइ छिंदित्ता सीहणायं करेइ करित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता तमेव अभिसेक्कं हत्थिं दुरूहइ दुरूहित्ता जेणेव बारवई णयरी, जेणेव सए गिहे तेणेव उवागए। अभिसेयहत्थिरयणाओ पच्चोरूहइ पच्चोरूहित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सए सीहासणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे णिसीयइ णिसीइत्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी -

कृष्ण! अर्हन्त अरिष्टनेमि कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार फरमाने लगे- देवानुप्रिय! तुम मानसिक विचारों के उपघातपूर्वक आर्तध्यान मत करो। देवानुप्रिय! तुम तीसरी पृथ्वी की जाज्वल्यमान नरक से निकलकर तदन्तर इसी जम्बूद्वीप नामक द्वीप में भरत क्षेत्र में आगामी उत्सर्पिणी में पुण्ड्र जनपदों में शतद्वार नगर में बारहवें अमम नामक तीर्थंकर बनोगे। वहाँ तुम अनेक वर्षों तक केवली की पर्याय में रहकर सिद्ध होओगे, बुद्ध होओगे, मुक्त होओगे, परिनिर्वाण को प्राप्त हो जाओगे, सभी दुःखों का अंत करोगे।

फिर वे कृष्ण वासुदेव अर्हन्त अरिष्टनेमि के पास इस बात

को सुनकर हर्षित हुए, संतुष्ट हुए, ताल ठोकते हैं ठोककर उछलते हैं, उछलकर तीन बार पैर पटकते हैं, सिंह के समान गर्जना करते हैं, अर्हन्त अरिष्टनेमि को वन्दन नमस्कार करते हैं, वन्दन नमस्कार करके उसी प्रधान हाथी पर चढ़ते हैं, चढ़कर जहाँ द्वारिका नगरी थी, जहाँ अपना महल था, वहाँ आए। प्रधान हस्तिरत्न से उतरते हैं, उतरकर जहाँ बाह्य सभागृह था, जहाँ अपना सिंहासन था, वहाँ आते हैं, आकर श्रेष्ठ सिंहासन पर पूर्व की ओर अभिमुख होकर बैठ जाते हैं। बैठकर अनुचरों को बुलवाते हैं, बुलवाकर इस प्रकार कहने लगे-

कृष्ण द्वारा दीक्षानन्तर पीछे के सार सम्हाल की उद्घोषणा

64. गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! बारवईए णयरीए सिंघाडग जाव उग्घोसेमाणा - उग्घोसेमाणा एवं वयह एवं खलु देवाणुप्पिया! बारवईए णयरीए दुवालसजोयणआयामाए णवजोयण वित्थिणाए। देवलोग पचक्खं भूयाए सुरग्गिदीवायण - मूलए विणासे भविस्सइ। तं जो णं देवाणुप्पिया! इच्छह बारवईएणयरीए राया वा जुवराया वा ईसरे वा तलवरे वा माडंविय - कोडुंबिय-इब्भे सेट्ठी वा देवी वा कुमारो वा कुमारी वा अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए मुंडे जाव पव्वइत्तए। तं णं कण्हे वासुदेवे विसज्जेइ।

पच्छातुरस्स वि य से अहापविन्तं वित्तिं अणुजाणइ। महया इड्ढिसक्कारसमुदएण य से निक्खमणं करेइ। दोच्चं पि तच्चं पि घोसणयं घोसेह घोसइत्ता ममं एयं आणत्तियं पच्चप्पिणह। तए णं ते कोडुंबिया जाव पच्चप्पिणंति।

देवानुप्रियो! तुम जाओ, द्वारिका नगरी में राजमार्गों पर, जहाँ तीन चार या अनेक मार्ग मिलते हैं, वहाँ उद्घोषणा करते हुए इस

प्रकार बोले-देवानुप्रियो! निश्चय ही बारह योजन लम्बी और नौ योजन चौड़ी, प्रत्यक्ष देवलोक के समान इस द्वारिका नगरी का सुरा, अग्नि एवं द्वैपायन ऋषि के कारण विनाश हो जाएगा। इसलिए देवानुप्रियो! द्वारिका नगरी में जो कोई राजा युवराज, ऐश्वर्यशाली व्यक्ति, राजप्रिय व्यक्ति, मडम्ब (ग्राम विशेष) का स्वामी, दो तीन कुटुम्बों का स्वामी, इभ्य (हाथी ढँक जाए इतने धन का स्वामी), सेठ, रानी, कुमार अथवा कुमारी अर्हन्त अरिष्टनेमि के पास मुण्ड भावपूर्वक गृहस्थ धर्म को छोड़कर मुनिधर्म को स्वीकार करना चाहे, उसे कृष्ण वासुदेव अनुमति देते हैं। जो कमाने वाला व्यक्ति दीक्षा लेगा, उसके पीछे रहे हुए रुग्ण व्यक्ति को भी पूर्ववत् आजीविका (वेतन आदि) उपलब्ध हो, इसकी अनुमति देते हैं। दीक्षार्थी को महान ऋद्धि सत्कार के साथ दीक्षित किया जाएगा। इस प्रकार दो बार, तीन बार घोषणा करो, घोषणा करके मुझे यह आज्ञा वापस लौटाओ, यानी कार्य सम्पन्नता की सूचना प्रदान करो। तब वे अनुचर उसी प्रकार करते हैं यावत् आज्ञा वापस लौटा देते हैं।

महारानी पद्मावती की प्रव्रज्या एवं मुक्ति

65. **तए णं सा पउमावई देवी अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियया अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी -**

'सद्दहामि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं, से जहेयं तुब्भे वयह। जं णवरं - देवाणुप्पिया! कण्हं वासुदेवं आपुच्छामि। तए णं अहं देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडा जाव पव्वयामि।'

'अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह।'

तए णं सा पउमावई देवी धम्मियं जाणप्पवरं दुरूहइ, दुरूहित्ता जेणेव बारवई णयरी जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरूहइ, पच्चोरूहित्ता जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल जाव कट्टु कण्हं वासुदेवं एवं वयासी -

इच्छामि णं देवाणुप्पिया! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणा अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए मुंडा जाव पव्वयामि।

अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह।

तए णं से कण्हे वासुदेवे कोडुंबिय - पुरिसे सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी -

खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! पउमावईए महत्थं णिक्खमणाभिसेयं उवट्ठवेह, उवट्ठवित्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह। तए णं ते जाव पच्चप्पिणंति।

फिर वह पद्मावती महारानी अर्हन्त अरिष्टनेमि के पास धर्म को श्रवण करके एवं हृदय में धारण करके हर्षित, सन्तुष्ट यावत् प्रफुल्ल हृदय वाली होकर अर्हन्त अरिष्टनेमि को वंदन करती है, नमस्कार करती है, वन्दन नमस्कार करके इस प्रकार कहने लगी-

'भंते! मैं निर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा, प्रतीति एवं रुचि करती हूं। यह वैसा ही है जैसा आप फरमाते हैं। देवानुप्रिय! मैं कृष्ण वासुदेव से अनुमति लेती हूं। फिर मैं आप देवानुप्रिय के समीप मुंडित होकर गृहस्थ धर्म को छोड़कर मुनिधर्म को स्वीकार करूंगी।

देवानुप्रिये! जिससे सुख हो। आसक्ति मत करना।

तब वह पद्मावती महारानी श्रेष्ठ धार्मिक यान पर चढ़ती है, चढ़कर जहाँ द्वारिका नगरी थी जहाँ अपना महल था वहाँ आती है,

आकर श्रेष्ठ धार्मिक यान से नीचे उतरती है, उतरकर जहाँ कृष्ण वासुदेव थे वहाँ आती है, आकर हाथ जोड़कर मस्तक पर अंजलि लगाकर कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार कहने लगी-

देवानुप्रिय! आपके द्वारा अनुमति प्राप्त होने पर मैं अर्हन्त अरिष्टनेमि के समीप मुंडित होकर मुनिधर्म को स्वीकार करना चाहती हूं।

देवानुप्रिये! जिससे तुम्हें सुख हो। प्रतिबन्ध मत करना।

तब वे कृष्ण वासुदेव कौटुम्बिक पुरुषों (कुटुम्ब का कार्य करने वालों) को बुलवाते हैं, बुलवाकर इस प्रकार कहने लगे-

'देवानुप्रियो! शीघ्रातिशीघ्र पद्मावती के लिए महान निष्क्रमणाभिषेक की तैयारियां करो, करके इस आज्ञा को पुनः लौटाओ। फिर वे कौटुम्बिक पुरुष तैयारियां करके पुनः आज्ञा को लौटाते हैं।

66. **तए णं से कण्हे वासुदेवे पउमावइं देविं पट्टयं दुरूहेइ दुरूहित्ता अट्ठसएणं सोवण्णकलसेणं जाव महाणिक्खमणा भिसेएणं अभिसिचंइ, अभिसिंचित्ता सव्वालंकारविभूसियं करेइ करित्ता पुरिससहस्सवाहिणिं सिवियं दुरूहावेइ दुरूहावित्ता बारवईए णयरीए मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव रेवयए पव्वए, जेणेव सहसंबवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सीयं ठवेइ 'पउमावइं देविं' सीयाओ पच्चोरूहइ, पच्चोरूहित्ता, तए णं से कण्हे वासुदेवे पउमावइं देविं पुरओ कट्टु जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं तिक्खुत्तो आयाहिणं - पयाहिणं करेई करित्ता वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी -**

एस णं भंते! मम अग्गमहिसी पउमावई णामं देवी इट्ठा कंता

पिया मणुण्णा मणाभिरामा जीवियऊसासा हिययाणंदजणिया उंबरपुप्फुविव दुल्लहा सवणयाए जाव किमंग पुण पासणयाए?

तण्णं अहं देवाणुप्पियाणं। सिस्सिणिभिक्खं दलयामि। पडिच्छंतु णं देवाणुप्पिया। सिस्सिणिभिक्खं।

तदनन्तर वे कृष्ण वासुदेव पद्मावती महारानी को पाट पर बिठलाते हैं, बिठलाकर एक सौ आठ स्वर्णकलशों से पद्मावती महारानी का अभिषेक करते हैं। यावत् महानिष्क्रमणाभिषेक से अभिषेक करते हैं। अभिषेक करके सभी आभूषणों से अलंकृत करते हैं, करके एक हजार पुरुषों द्वारा उठाई जा सकने वाली शिविका पर चढ़ाते हैं, चढ़ाकर द्वारिका नगरी के मध्य से निकलते हैं, निकलकर जहाँ रैवतक पर्वत था, जहाँ सहस्राम्रवन उद्यान था, वहाँ आते हैं, आकर शिविका रुकवाते हैं, पद्मावती महारानी को शिविका से नीचे उतारते हैं। उतारकर फिर वे कृष्ण वासुदेव पद्मावती महारानी को आगे करके जहाँ अर्हन्त अरिष्टनेमि थे, वहाँ आते हैं, आकर अर्हन्त अरिष्टनेमि की तीन बार उनके दाहिनी ओर से प्रदक्षिणा करते हैं, करके वन्दन करते हैं, नमस्कार करते हैं, वन्दन नमस्कार करके इस प्रकार कहने लगे-

'भंते! यह मेरी पटरानी पद्मावती महारानी मुझे इष्ट, कान्त, प्रिय, मनोज्ञ मन को सुंदर लगने वाली, जीवन की वृद्धि करने वाली, हृदय में आनंद उत्पन्न करने वाली है, जिसके विषय में सुनना भी गूलर के फूल के समान दुर्लभ है। तो फिर उसे देखने का तो कहना ही क्या? उसे मैं आप देवानुप्रिय को शिष्या रूप में भिक्षा दे रहा हूं। देवानुप्रिय! आप शिष्या की भिक्षा को स्वीकार करें।

प्रभु ने इस अर्थ को सम्यक् रूप से स्वीकार किया।

67. तए णं सा पउमावई देवी उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं, अवक्कमइ, अवक्कमित्ता सयमेव आभरणालंकारं ओमुयइ, ओमुयित्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेई, करित्ता जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-आलित्तेणं भंते लोए पलित्तेणं भंते लोए, आलित्तपलित्ते णं भंते लोए जराए मरणेण य जाव तं इच्छामि णं देवाणुप्पिएहिं धम्ममाइक्खियं।

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी पउमावइं देविं सयमेव पव्वावेइ पव्वावित्ता सयमेव मुण्डावेइ सयमेव जक्खिणीए अज्जाए सिस्सिणित्ताए दलयइ। तए णं सा जक्खिणी अज्जा पउमावइं देविं सयमेव पव्वावेइ जाव संजमियव्वं। तए णं सा पउमावई अज्जा जाया। इरियासमिया जाव गुत्त - बंभयारिणी। तए णं सा पउमावई अज्जा जक्खिणीए अज्जाए अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, अहिज्जित्ता बहूहिं चउत्थ-छट्ठट्ठम-दसम-दुवालसेहिं मासद्धमासखमणेहिं विविहेहिं तवोक्कमेहिं अप्पाणं भावेमाणी विहरइ।

तए णं सा पउमावई अज्जा बहुपडिपुण्णाइं वीसं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणइ, पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसेइ, झूसेत्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेइ, छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ णग्गभावे जाव तमट्ठं आराहेइ चरिमुस्सासेहिं सिद्धा।

फिर वह पद्मावती महारानी उत्तर पूर्व दिशा भाग की तरफ हटती है, हटकर स्वयं ही आभूषणों को अलग करती है, अलग करके स्वयं पंचमुष्टिक लोच करती है, करके जहाँ अर्हन्त अरिष्टनेमि थे, वहाँ आती है, आकर अर्हन्त अरिष्टनेमि को वंदन करती है, नमस्कार करती है, वन्दन नमस्कार करके इस प्रकार कहने लगी-भंते! यह लोक

बुढ़ापे और मृत्यु से आदीप्त है, प्रदीप्त है, ज्वलित प्रज्वलित है। मैं चाहती हूँ कि आप स्वयं मुझे दीक्षित करें यावत् संयमी जीवन की शिक्षा प्रदान करें।

तब अर्हन्त अरिष्टनेमि पद्मावती देवी को स्वयं दीक्षित करते हैं। स्वयं भावरूप से मुण्डित करते हैं और स्वयं यक्षिणी आर्या को शिष्या रूप में देते हैं। फिर यह यक्षिणी आर्या पद्मावती देवी को स्वयं दीक्षित करती है, यावत् संयम जीवन की शिक्षाएं प्रदान करती है कि यतना से सभी कार्यों को करना चाहिए। तब वह पद्मावती साध्वी बन गई। ईर्या समिति आदि समितियों का पालन करती है, यावत् ब्रह्मचर्य की रक्षा करते हुए विचरण करने लगी। तदनन्तर वह पद्मावती आर्या यक्षिणी आर्या के समीप ग्यारह अंगों का अध्ययन करती है, अध्ययन करके अनेक उपवास, बेले, तेले, चार, पांच, आधामासखमण, मासखमण आदि विविध तपश्चर्याओं के द्वारा आत्मा को भावित करते हुए विचरण करने लगी।

तब वह पद्मावती आर्या लगभग बीस वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन करती है, पालन करके एक मास की संलेखना से आत्मा को परितृप्त करती है, अनशन रूप से साठ भक्तों का छेदन करती है, करके जिस प्रयोजन से नग्नत्व यानी मुनित्व को स्वीकार किया जाता है तथा अनेक परिषह उपसर्गों को सहन किया जाता है, उस प्रयोजन को आराधित करती है तथा अंतिम श्वासोच्छ्वास के साथ सिद्ध, बुद्ध, मुक्त अवस्था को प्राप्त कर लेती है।

* * *

2-8 अध्ययन

68. **उक्खेवओ य अज्जयणस्स।**

तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवई णयरी। रेवयए पव्वए उज्जाणे णंदणवणे। तत्थ णं बारवईए णयरीए कण्हे वासुदेवे। तस्स णं कण्हस्स वासुदेवस्स गोरी देवी, वण्णओ।

अरहा अरिट्ठणेमी समोसढे। कण्हे णिग्गए गोरी जहा पाउमावई तहा णिग्गया। धम्मकहा। परिसा पडिगया। कण्हे वि पडिगए। तए णं सा गोरी जहा पउमावई तहा णिक्खंता जाव सिद्धा।

एवं-गंधारी लक्खणा सुसीमा जम्बवई सच्चभामा रूप्पिणी अट्ठवि पउमावई सरिसयाओ अट्ठ अज्झयणा।

आर्य जम्बू द्वारा आर्य सुधर्मा से श्रमण भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित अन्तगडदशा अंग के पांचवें वर्ग के द्वितीय अध्ययन की जिज्ञासा व्यक्त करने पर आर्य सुधर्मा स्वामी फरमाते हैं-

उस काल उस समय में द्वारिका नामक नगरी थी। रैवतक पर्वत था। नन्दनवन नामक उद्यान था। उस द्वारिका नगरी में कृष्ण वासुदेव राज्य करते थे। उस कृष्ण वासुदेव के गौरी नाम की महारानी थी।

अर्हन्त अरिष्टनेमि पधारे। कृष्ण वासुदेव भगवान की पर्युपासना हेतु निकले। महारानी गौरी भी महारानी पद्मावती की तरह ही प्रभु की सेवा में गई। भगवान ने धर्मदेशना फरमाई। जनसमूह देशना श्रवण करके लौट गया। कृष्ण वासुदेव भी लौट गए। गौरी महारानी भी प्रभु के समक्ष रानी पद्मावती के समान दीक्षा हेतु निवेदन करने लगी। महाराज कृष्ण से अनुमति लेकर प्रभु के चरणों में दीक्षित हुई यावत् सिद्ध, बुद्ध, मुक्त अवस्था को प्राप्त होती है।

इसी प्रकार गान्धारी, लक्ष्मणा, सुसीमा, जाम्बवती, सत्यभामा

एवं रुक्मिणी। इन आठ अध्ययन में आठों रानियों का जीवन वर्णन पद्मावती रानी के तुल्य ही है। सभी ने कृष्ण महाराज से अनुमति लेकर प्रभु चरणों में दीक्षा ली यावत् सिद्धि को प्राप्त किया।

9-10 अध्ययन

69. **उक्खेवओ य नवमस्स।**

तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए णयरीए रेवयए पव्वए णंदणवणे उज्जाणे, कण्हे वासुदेवे। तत्थ णं बारवईए णयरीए कण्हस्स वासुदेवस्स पुत्ते जंबवईए देवीए अत्तए संबे णामं कुमारे होत्था अहीणपडिपुण्णपंचिंदियसरीरे। तस्स णं संबस्स कुमारस्स मूलसिरी णामं भज्जा वि णिग्गया, जहा पउमावई। जं णवरं - देवाणुप्पिया! कण्हं वासुदेवं आपुच्छामि जाव सिद्धा। एवं मूलदत्ता वि।

।। पंचमो वग्गो सम्मत्तो।।

आर्यसुधर्मा स्वामी आर्य जम्बू को नवें अध्ययन का अर्थ प्रतिपादित करते हुए फरमाते हैं-

जम्बू! उस काल उस समय में द्वारिका नगरी थी। रैवतक नामक पर्वत, नन्दनवन नामक उद्यान था। कृष्ण वासुदेव राज्य करते थे। उस द्वारिका नगरी में कृष्ण वासुदेव के पुत्र, जाम्बवती देवी के आत्मज शाम्ब नामक कुमार थे। उनका शरीर एवं इंद्रियां परिपूर्ण थी। उस शाम्ब कुमार की मूलश्री नामक भार्या थी। वह भी पद्मावती रानी के समान प्रभु चरणों में पहुंची। प्रभु चरणों में निवेदन किया-देवानुप्रिय! कृष्ण वासुदेव को पूछकर दीक्षा ग्रहण करूंगी यावत् संयम लेकर सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुई।

इसी प्रकार मूलदत्ता का भी वर्णन है। वह भी शाम्ब कुमार की भार्या थी तथा प्रव्रज्या ग्रहण करके सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुई।

।। पांचवां वर्ग समाप्त।।

छट्ठो वग्गो : षष्ठ वर्ग

1-2 अध्ययन

70. जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं पंचमस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, छट्ठस्स णं भंते! वग्गस्स के अट्ठे पण्णत्ते?

एवं खलु जंबु! समणेणं भगवया महावीरेणं अट्ठमस्सअंगस्स अंतगडदसाणं छट्ठस्स वग्गस्स सोलस अज्झयणा पण्णत्ता, तं जहा - संगहणी गाहा :-

1. मंकाई 2. किंकमे चेव 3. मोग्गरपाणी य 4. कासवे 5. खेमए 6. धिइहरे, चेव 7. केलासे 8. हरिचंदणे।।1।। 9. वारत्त 10. सुदंसण 11. पुण्णभद्द तह 12. सुमणभद्द 13. सुपइट्ठे 14. मेहे 15. अइमुत्ते 16. अलक्खे अज्झयणाणं तु सोलसयं।।2।।

जइ सोलस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते! अज्झयणस्स अंतगडदसाणं के अट्ठे पण्णत्ते?

भंते! यदि श्रमण भगवान महावीर द्वारा आठवें अंग अंतगडदशा के पांचवें वर्ग का यह अर्थ फरमाया गया तो भंते! छठे वर्ग का क्या अर्थ फरमाया गया?

जम्बू! श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के छठे वर्ग के सोलह अध्ययन फरमाए थे। वे इस प्रकार हैं -

1. मंकाई 2. किंकम 3. मुद्गरपाणि 4. काश्यप 5. क्षेमक 6. धृतिधर 7. कैलाश 8. हरिचन्दन 9. वारत्त 10. सुदर्शन 11. पूर्णभद्र 12. सुमनभद्र 13. सुप्रतिष्ठ 14. मेघ 15. अतिमुक्त तथा 16. अलक्ष।

भंते! यदि छठे वर्ग के सोलह अध्ययन फरमाए गए थे तो प्रथम अध्ययन का भगवान ने क्या अर्थ फरमाया था?

71. **एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णयरे। गुणसिलए चेइए। सेणिए राया। तत्थ णं मंकाई णामं गाहावई परिवसइ-अड्ढे जाव अपरिभूए।**

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे आइगरे जाव गुणसिलए जाव विहरइ। परिसा णिग्गया। तए णं से मंकाई गाहावई इमीसे कहाए। लद्धट्ठे जहा पण्णत्तीए गंगदत्ते तहेव इमो वि जेट्ठपुत्तं कुडुंबे ठवित्ता पुरिस-सहस्स-वाहिणीए सीयाए णिक्खंत्ते जाव अणगारे जाए - इरियासमिए जाव गुत्तबंभयारी।

तए णं से मंकाई अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइय - माइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ। सेसं जहा खंदयस्स गुणरयणं तवोकम्मं सोलसवासाइं परियाओ। तहेव विउले सिद्धे।

।।पढमो अज्झयणो समत्तो।।

जम्बू! उस काल उस समय में राजगृह नामक नगर था। गुणशील नामक उद्यान था। श्रेणिक राजा वहाँ राज्य करते थे। वहाँ मंकाई नामक ऋद्धिसम्पन्न यावत् अपरिभूत गृहपति रहता था।

उस काल उस समय में धर्म के आदिकर श्रमण भगवान महावीर स्वामी ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए राजगृह नगर के बाहर गुणशील उद्यान में पधारकर विराजे। परिषद् धर्मश्रवण हेतु निकली। उस समय उस मंकाई गाथापति को यह बात ज्ञात होने पर वह भी भगवान की वाणी सुनने हेतु निकला। भगवान से धर्मदेशना को श्रवण

करके प्रव्रजित होने का निश्चय किया। श्रीमद् भगवती सूत्र में वर्णित गंगदत्त के समान ही मंकाई गाथापति ने भी ज्येष्ठ पुत्र को कुटुम्ब में स्थापित करके एक हजार पुरुषों द्वारा उठाई जा सकने वाली शिविका में बैठकर निष्क्रमण किया। प्रभु से प्रव्रज्या स्वीकार करके अनगार बन गए तथा ईर्यासमिति आदि का सम्यक् पालन करते हुए यावत् गुप्त ब्रह्मचर्य का आराधन करने लगे।

तब वे मंकाई अनगार श्रमण भगवान महावीर के तथारूप (जिनका जीवन अपने वेश के अनुरूप है) स्थविरों के पास सामायिक से लेकर ग्यारह अंगों का अध्ययन करते हैं। स्कन्दक अनगार के समान ही गुणरत्न संवत्सर तपःकर्म आदि की आराधना करते हैं। सोलह वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन करते हैं तथा यथासमय विपुल पर्वत पर जाकर संलेखना संथारा करके सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुए।

।। प्रथम अध्ययन पूर्ण।।

किंकमे वि एवं चेव जाव विउले सिद्धे।

।। बिइयमज्झयणं समत्तं।।

दूसरे अध्ययन में किंकम नामक गाथापति का वर्णन है, जो राजगृह नगर में रहते थे तथा भगवान महावीर के चरणों में मंकाई के समान दीक्षित हुए यावत् विपुल पर्वत पर सिद्ध, बुद्ध मुक्त हुए।

।। द्वितीय अध्ययन पूर्ण।।

तृतीय अध्ययन : मुद्गरपाणि

72. **तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णयरे। गुणसीलए चेइए। सेणिए राया। चेलणा देवी। तत्थ णं रायगिहे णयरे अज्जुणए णामं मालागारे परिवसइ, अड्ढे जाव अपरिभूए। तस्स णं अज्जुणयस्स**

मालायारस्स बंधुमई णामं भारिया होत्था - सुकुमालपाणिपाया। तस्स णं अज्जुणयस्स मालायारस्स रायगिहस्स णयरस्स बहिया, एत्थ णं महं एगे पुप्फारामे होत्था-किण्हे जाव णिउरंबभूए दसद्धवण्णकुसुम-कुसुमिए पासाईए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे।

तस्स णं पुप्फारामस्स अदूरसामंते, तत्थणं अज्जुणयस्स मालायारस्स अज्जय-पज्जय-पिइपज्जयागए अणेग-कुलपुरिस-परंपरागए मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणे होत्था। पोराणे दिव्वे सच्चे जहा पुण्णभद्दे। तत्थ णं मोग्गरपाणिस्स पडिमा एगं महं पलसहस्सणिप्फण्णं अओमयं मोग्गरं गहाय चिट्ठइ।

उस काल उस समय में राजगृह नामक नगर था। गुणशील नामक उद्यान था। श्रेणिक महाराजा राज्य करते थे। उनके चेलना नाम की महारानी थी। उस राजगृह नगर में अर्जुन नाम का माली निवास करता था। वह ऋद्धि सम्पन्न यावत् अपरिभूत था। उस अर्जुन माली की बन्धुमति नाम की भार्या थी। वह सुकुमाल हाथ-पैरों वाली यावत् अनेक लक्षणों से सम्पन्न थी। राजगृह नगर के बाहर उस अर्जुन मालाकार के एक बहुत बड़ा फूलों का बगीचा था, जिसमें नीले, काले, लाल, पीले एवं सफेद पांच वर्णों के फूल खिले रहने से वह प्रसन्नता उत्पन्न करने वाला, दर्शनीय, अभिरूप एवं प्रतिरूप था।

उस फूलों के बगीचे के न अधिक दूर तथा न अधिक समीप में अर्जुन माली के दादा, पड़दादा तथा पिता के पड़दादा से चला आ रहा, कुल के अनेक पुरुषों की परम्परा से आगत मुद्गरपाणि यक्ष का एक यक्षायतन था। श्री उववाई सूत्र में वर्णित पूर्णभद्र यक्षायतन के समान ही यह भी बहुत पुराना, दिव्य तथा सत्य स्वरूप था। उस

मुद्गरपाणि यक्षायतन में मुद्गरपाणि यक्ष की प्रतिमा एक बहुत बड़े हजार पल के (62½ सेर के) लोहे के बने हुए मुद्गर को लेकर खड़ी थी।

73. **तए णं से अज्जुणए मालागारे बालप्पभिइं चेव मोग्गरपाणि-जक्खभत्ते यावि होत्था। कल्लाकल्लिं पच्छियपिडगाइं गिण्हइ, गिण्हित्ता रायगिहाओ णयराओ पडिणिक्खमइ पडिणिक्खमित्ता जेणेव पुप्फारामे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पुप्फच्चयं करेई करेत्ता अग्गाइं वराइं पुप्फाइं गहाय जेणेव मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स महरिहं पुप्फच्चणयं करेइ, करेत्ता जाणुपायपडिए पणामं करेइ, तओ पच्छा रायमग्गंसि विर्ति कप्पेमाणे विहरइ।**

वह अर्जुन माली बचपन से ही मुद्गरपाणि यक्ष का भक्त था। नित्य प्रति बेंत आदि से बनी टोकरियों को लेता, लेकर राजगृह नगर से बाहर निकलता, निकलकर जहाँ फूलों का बगीचा था, वहाँ आता, आकर फूल चुनता, चुनकर उनमें से उत्तम, श्रेष्ठ फूलों को लेकर जहाँ मुद्गरपाणि यक्ष का यक्षायतन था, वहाँ आता, आकर मुद्गरपाणि यक्ष की फूलों से पूजा करता, करके घुटने टेककर प्रणाम करता एवं उसके पश्चात् राजमार्ग पर आजीविका करते हुए विचरण करता था।

अर्जुन एवं उसकी भार्या के साथ दुर्व्यवहार

74. **तत्थ णं रायगिहे णयरे ललिया णामं गोट्ठी परिवसइ, अड्ढा जाव अपरिभूया जंकयसुकया यावि होत्था।**

तए णं रायगिहे णयरे अण्णया कयाइ पमोए घुट्टे यावि होत्था। तए णं से अज्जुणए मालागारे कल्लं पभूयतरएहिं पुप्फेहिं कज्जमिति कट्टु पच्चूसकालसमयंसि, बंधुमइए भारियाए सद्धिं पच्छिपिडयाइं

गिण्हइ, गिण्हित्ता सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता रायगिहं णयरं मज्झमंज्झेणं णिग्गच्छइ णिग्गच्छित्ता जेणेव पुप्फारामे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता बंधुमईए भारियाए सद्धिं पुप्फच्चयं करेइ। तए णं तीसे ललियाए गोट्ठीए छ गोट्ठिल्ला पुरिसा जेणेव मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागया अभिरममाणा चिट्ठंत्ति।

उस राजगृह नगर में ललिता नामक गोष्ठी अर्थात् स्वेच्छाचारी मित्रों का समुदाय रहता था। वह गोष्ठी ऋद्धिसम्पन्न यावत् किसी से परिभूत नहीं होने वाली थी। वह गोष्ठी कुछ भी करती, उसे राजा व नागरिकों आदि के द्वारा सुकृत मान लिया जाता था।

किसी अन्य समय राजगृह नगर में महोत्सव की घोषणा हुई। तब वह अर्जुन माली यह सोचकर कि कल और ज्यादा फूलों की आवश्यकता होगी, प्रातः तड़के बन्धुमती भार्या के साथ टोकरियां लेता है, लेकर अपने घर से निकलता है, निकलकर राजगृह नगर के बीच से निकलता है, निकलकर जहाँ फूलों का बगीचा था, वहाँ आता है, आकर बन्धुमती भार्या के साथ फूलों को चुनने लग जाता है। उस समय उस ललिता गोष्ठी के छह गोठीले पुरुष जहाँ मुद्गरपाणि यक्ष का यक्षायतन था, वहाँ आए हुए क्रीड़ा कर रहे थे।

75. **तए णं अज्जुणए मालागारे बंधुमईए भारियाए सद्धिं पुप्फच्चयं करेइ करित्ता अग्गाइं वराइं पुप्फाइं गहाय जेणेव मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छइ। तए णं ते छ गोट्ठिल्ला पुरिसा अज्जुणयं मालागारं बंधुमईए भारियाए सद्धिं एज्जमाणं पासंति पासित्ता अण्णमण्णं एवं वयासी -**

'एस णं देवाणुप्पिया! अज्जुणए मालागारे बंधुमईए भारियाए सद्धिं इहं हव्वमागच्छइ। तं सेयं खलु देवाणुप्पिया। अम्हं अज्जुणयं मालागारं अवओडयबंधणयं करित्ता बंधुमईए भारियाए सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणाणं विहरित्तए', त्ति कट्टु एयमट्ठं अण्णमण्णस्स पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता कवाडंतरेसु णिलुक्कंति, णिच्चला, णिप्फंदा तुसिणीया, पच्छण्णा चिट्ठंति। तए णं से अज्जुणए मालागारे बंधुमईए भारियाए सद्धिं जेणेव मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता आलोए पणामं करेइ, करित्ता महरिहं पुप्फच्चणं करेइ, करित्ता जाणुपायवडिए पणामं करेइ। तए णं ते छ गोट्ठिल्ला पुरिसा दवदवस्स कवाडंतरेहिंतो णिग्गच्छंति णिग्गच्छित्ता अज्जुणयं मालागारं गिण्हंति गिण्हित्ता अवओडयबंधणं करेंति करित्ता बंधुमईए मालागारीए सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरंति।

अर्जुन माली बन्धुमती भार्या के साथ फूल चुनता है, चुनकर श्रेष्ठ, प्रधान फूलों को लेकर जहाँ मुद्गरपाणियक्ष का यक्षायतन था, वहाँ आता है। तब वे छः गोठीले पुरुष अर्जुन माली को बन्धुमती भार्या के साथ आते हुए देखते हैं। देखकर एक दूसरे को इस प्रकार कहने लगे -

'देवानुप्रियो! यह अर्जुन माली बन्धुमती भार्या के साथ शीघ्र यहां आ रहा है। अतः देवानुप्रियो! हमारे लिए यह श्रेयस्कर है कि हम अर्जुन माली को अवकोटक बन्धन में बांधकर अर्थात् सिर व भुजाओं को पीठ की तरफ बांधकर बन्धुमती भार्या के साथ विपुल भोगों को भोगते हुए विचरण करें,' इस प्रकार विचार करके इस बात को परस्पर स्वीकार करते हैं, स्वीकार करके कपाटों के बीच में छिप जाते है, तथा

निश्चल, निस्पन्द, मौन होकर प्रच्छन्न हो जाते हैं। इधर वह अर्जुन माली बन्धुमती भार्या के साथ जहाँ मुद्गरपाणि यक्ष का यक्षायतन था, वहाँ आता है आकर मूर्ति को देखकर प्रणाम करता है, करके फूलों से पूजा करता है, करके घुटने टेककर प्रणाम करता है। तब वे 6 गोठीले पुरुष अतिशीघ्र कपाटों के बीच में से निकलते हैं, निकलकर अर्जुन माली को पकड़ते हैं, पकड़कर अवकोटक बंधन से बांधते हैं, बांधकर बन्धुमती मालिन के साथ विपुल भोगों को भोगते हुए विचरते हैं।

अर्जुनमाली के मनोभाव और यक्षावेश का प्रभाव

76. तए णं तस्स अज्जुणयस्स मालागारस्स अयमज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पजित्था-एवं खलु अहं बालप्पभिइं चेव मोग्गरपाणिस्स भगवओ कल्लाकल्लिं जाव पुप्फच्चयं करेमि, जाणुपायवडिए पणामं करेमि तओ पच्छा रायमग्गंसि वित्तिं कप्पेमाणे विहरामि। तं जइ णं मोग्गरपाणी जक्खे इह सण्णिहिए होंति से णं किं ममं एयारूवं आवइं पावेज्जमाणं पासंते? तं नत्थि णं मोग्गरपाणी जक्खे इह सण्णिहिए। सुव्वत्तं तं एस कट्ठे। तए णं से मोग्गरपाणी जक्खे अज्जुणयस्स मालागारस्स अयमेयारूवं अज्झत्थियं जाव वियाणित्ता अज्जुणयस्स मालागारस्स सरीरयं अणुप्पविसइ, अणुप्पविसित्ता तडतडस्स बंधाइं छिंदइ, छिंदित्ता तं पलसहस्सणिप्फण्णं अओमयं मोग्गरं गिण्हइ, गिण्हित्ता ते इत्थिसत्तमे छ पुरिसे घाइए।

तए णं से अज्जुणए मालागारे मोग्गरपाणिणा जक्खेणं अण्णाइट्ठे समाणे रायगिहस्स णयरस्स परिपेरंतेणं कल्लाकल्लिं इत्थिसत्तमे छ पुरिसे घाएमाणे घाएमाणे विहरइ।

उस समय उस अर्जुन माली के यह अध्यवसाय चिन्तन, प्रार्थित, मनोगत, संकल्प उत्पन्न हुआ, - मैं बाल्यावस्था से लेकर नित्य प्रति मुद्गरपाणि भगवान की पुष्पों से अर्चना करता हूं, घुटने टेककर प्रणाम करता हूँ एवं उसके पश्चात् राजमार्ग पर आजीविका कमाता हुआ विचरता हूं। यदि मुद्गरपाणि यक्ष यहां उपस्थित होते तो क्या वे मुझे इस प्रकार की आपत्ति को प्राप्त करते हुए देख सकते? अतः मुद्गरपाणि यक्ष यहां उपस्थित नहीं हैं। सुस्पष्ट रूप से यह कोरा काठ है। फिर वह मुद्गरपाणि यक्ष अर्जुन माली के इस प्रकार के अध्यवसाय, चिन्तन, मनोगत, संकल्प को जानकर अर्जुन माली के शरीर में प्रवेश करता है, प्रवेश करके तड़-तड़ करके बन्धनों को तोड़ता है, तोड़कर एक हजार पल (लगभग साढ़े बासठ सेर वजन) के लोहे के बने हुए मुद्गर को लेता है, लेकर उन छह पुरुषों और सातवीं उस स्त्री का घात कर देता है।

तब वह अर्जुन माली मुद्गरपाणि यक्ष द्वारा आविष्ट होने पर राजगृह नगर के बाहर चारों ओर छः पुरुषों और एक स्त्री को नित्य मौत के घाट उतारता हुआ विचरने लगा।

श्रेणिक महाराज की चेतावनीपरक उद्घोषणा

77. तए णं रायगिहे णयरे सिंघाडग जाव महापहेसु बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खई एवं भासेइ एवं पण्णवेइ एवं परूवेइ।

एवं खलु देवाणुप्पिया! अज्जुणए मालागारे मोग्गरपाणिणा जक्खेणं अणाइट्ठे समाणे रायगिहे णयरे बहिया इत्थिसत्तमे छ पुरिसे घाएमाणे घाएमाणे विहरइ।

तए णं से सेणिए राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे कोडुंबिय पुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी -

'एवं खलु देवाणुप्पिया! अज्जुणए मालागारे जाव घाएमाणे विहरइ। तं मा णं तुब्भे केइ तणस्सवा कट्ठस्स वा पाणियस्स वा पुप्फफलाणं वा अट्ठाए सइरं णिग्गच्छउ। मा णं तस्स सरीरस्स वावती भविस्सइ। त्ति कट्टु दोच्चं पि तच्चं पि घोसणयं घोसेह, घोसित्ता खिप्पामेव ममेयं पच्चप्पिणह।' तए णं से कोडुंबिय पुरिसा जाव पच्चप्पिणंति।

उस समय राजगृह नगर में जहाँ तीन-चार या अनेक मार्ग मिलते यहां राजमार्गों पर अनेक व्यक्ति परस्पर इस प्रकार कहने लगे, बतलाने लगे, चर्चा करने लगे-

'देवानुप्रियो! अर्जुन माली मुद्गरपाणी यक्ष से आविष्ट होकर राजगृह नगर के बाहर छः पुरुषों और एक स्त्री का घात करता हुआ विचर रहा है।'

तब श्रेणिक राजा को यह बात ज्ञात होने पर वे कौटुम्बिक पुरुषों को बुलवाते हैं, बुलवाकर इस प्रकार कहने लगे-

'देवानुप्रियो'! अर्जुन माली राजगृह नगर के बाहर यक्षाविष्ट होकर नित्य छह पुरुषों एवं एक स्त्री का घात करता हुआ विचर रहा है। इसलिए आप में से कोई घास के लिए, लकड़ी के लिए, जल के लिए अथवा फूलों-फलों के लिए अपनी इच्छानुसार नगर के बाहर न जाए, अन्यथा उस जाने वाले के शरीर का नाश हो सकता है, इस प्रकार दो-तीन बार घोषणा करो व घोषणा करके मुझे यह आज्ञा प्रत्यार्पित करो यानी आज्ञा के पालन किए जाने की सूचना प्रदान करो। तब वे कौटुम्बिक पुरुष आज्ञानुसार उद्घोषणा करते हैं यावत् आज्ञा को पुनः लौटा देते हैं।

सुदर्शन श्रमणोपासक की प्रभु दर्शनों की उत्कण्ठा

78. **तत्थ णं रायगिहे णयरे सुदंसणे णामं सेट्ठी परिवसइ अड्ढे जाव अपरिभूए। तए णं से सुदंसणे समणोवासए यावि होत्था अभिगयजीवाजीवे जाव विहरइ।**

उस राजगृह नगर में ऋद्धि सम्पन्न यावत् अपरिभूत सुदर्शन नामक सेठ रहता था। वह सुदर्शन श्रमणोपासक था तथा जीव, अजीव को जानने वाला यावत् श्रमणोपासक के अनेक गुणों से युक्त होकर श्रमण निर्ग्रन्थों को प्रासुक, एषणीय अशन, पान, खादिम, स्वादिम से प्रतिलाभित करता हुआ रहता था।

79. **तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे समोसढे जाव विहरइ। तए णं रायगिहे णयरे, सिंघाडग जाव महापहेसु बहुजणो अण्णमण्णस्स एवामइक्खइ जाव किमंग पुण विउलस्स अत्थस्स गहणयाए?**

उस काल उस समय में श्रमण भगवान महावीर पधारे यावत् अवग्रह की अनुज्ञा लेकर राजगृह नगर के बाहर गुणशील उद्यान में विराजते हैं। तब उस राजगृह नगर में जहाँ तीन, चार या अनेक मार्ग मिलते यावत् जहाँ राजमार्ग थे वहाँ अनेक व्यक्ति एक दूसरे को इस प्रकार कहते हैं कि तीर्थंकर श्रमण भगवान महावीर गुणशील नामक उद्यान में पधार चुके हैं। उन भगवंतों का नाम, गोत्र, श्रवण करना भी महान लाभ का कारण है। तो फिर उनके दर्शन, वन्दन, पर्युपासन यावत् उनसे विपुल अर्थ के ग्रहण के लाभ का तो कहना ही क्या?

80. **तए णं तस्स सुदंसणस्स बहुजणस्स अंतिए एयं अट्ठं**

सोच्चा णिसम्म अयं अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था एवं खलु समणे भगवं महावीरे जाव विहरइ। तं गच्छामि णं समणं भगवं महावीरं वंदामि णमंसामि; एवं संपेहेइ संपेहित्ता जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयलसंपरिग्गहियं जाव दसणहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी -

'एवं खलु अम्मयाओ! समणे भगवं महावीरे जाव विहरइ। तं गच्छामि णं समणं भगवं महावीरं वंदामि णमंसामि जाव पज्जुवासामि'। तए णं सुदंसणं सेट्ठिं अम्मापियरो एवं वयासी-

'एवं खलु पुत्ता! अज्जुणए मालागारे जाव घाएमाणे घाएमाणे विहरइ। तं मा णं तुमं पुत्ता। समणं भगवं महावीरं वंदइ णिग्गच्छाहि, मा णं तव सरीरयस्स वावत्ती भविस्सइ। तुमाणं इहगए चेव समणं भगवं महावीरं वंदाहि णमंसाहि''।

अनेक व्यक्तियों से यह बात सुनकर उस सुदर्शन श्रमणोपासक के इस प्रकार का अध्यवसाय, चिन्तन, प्रार्थित, मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ कि श्रमण भगवान महावीर इसी राजगृह नगर के बाहर गुणशील उद्यान में विराज रहे हैं। अतः मैं जाऊं और श्रमण भगवान महावीर को वन्दन नमस्कार करूं, इस प्रकार विचार करता है। विचार करके जहाँ माता-पिता थे वहाँ आता है, आकर दोनों हाथ जोड़कर सिर पर आवर्त्तन देकर मस्तक पर अंजलि लगाकर इस प्रकार कहने लगा-

'माताजी-पिताजी! श्रमण भगवान महावीर इस राजगृह नगर के बाहर गुणशील उद्यान में विराज रहे हैं। अतः मैं श्रमण भगवान महावीर को वन्दन नमस्कार यावत् पर्युपासना करने चला जाऊं?'

तब माता-पिता सुदर्शन सेठ को इस प्रकार कहने लगे-

'पुत्र! अर्जुन माली यक्षाविष्ट होकर राजगृह नगर के बाहर नित्य प्रति छह पुरुषों और एक स्त्री का घात करता हुआ विचर रहा है। अतः पुत्र! तुम श्रमण भगवान महावीर को वन्दन नमस्कार करने के लिए बाहर मत जाओ। कहीं तुम्हारे शरीर की क्षति न हो जाए। तुम यहां रहकर ही श्रमण भगवान महावीर को वन्दन नमस्कार कर लो।'

सुदर्शन का प्रभु वन्दन हेतु गमन

81. **तए णं से सुदंसणे सेट्ठि अम्मापियरं एवं वयासी 'किण्णं अहं अम्मायाओ। समणं भगवं महावीरं इहमागयं इह पत्तं इह समोसढं इह गए चेव वंदिस्सामि णमंसिस्सामि? तं गच्छामि णं अहं अम्मयाओ। तुब्भेहिं अब्भण्णुण्णाए समाणे समणं भगवं महावीरं वंदामि णमंसामि जाव पज्जुवासामि।'**

तए णं सुदंसणं सेट्ठिं अम्मापियरो जाहे नो संचाएंति बहूहिं आघवणाहिं जाव परूवेत्तए ताहे एवं वयासी -

'अहासुहं देवाणुप्पिया'।

तए णं से सुदंसणे अम्मापिईहिं अब्भणुण्णए समाणे ण्हाए सुद्धप्पा-वेसाइं मंगलाइं वत्थाइं पवरपरिहिए अप्पमहग्घाभरणालंकिय सरीरे सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता पायविहारचारेणं रायगिहं णयरं मज्झमंज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणस्स अदूरसामंतेणं जेणेव गुणसिलए चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

तब वह सुदर्शन सेठ माता-पिता को इस प्रकार कहने लगा- माताजी-पिताजी! यह कैसे हो सकता है कि मैं यहां गुणशील उद्यान में पधारे हुए, यहां रहे हुए यहां धर्मोपदेश देते हुए विराजमान श्रमण

भगवान महावीर को यहीं से (घर बैठे) वन्दन नमस्कार कर लूं। अतः माताजी-पिताजी! आपकी अनुज्ञा प्राप्त होने पर मैं श्रमण भगवान महावीर को वन्दना नमस्कार करने के लिए जाना चाहता हूं।

माता-पिता सुदर्शन सेठ को जब अनेक कथनों से, समझाइशों से समझाने में समर्थ नहीं हुए तो कहा- देवानुप्रिय! जिससे तुम्हें सुख हो।

फिर वह सुदर्शन माता-पिता से अनुज्ञात होने पर स्नान करके, शुद्ध प्रवेश योग्य मांगलिक वस्त्रों को धारण करके अल्पभार वाले बहुमूल्य आभूषणों से शरीर को अलंकृत करके अपने घर से निकलता है, निकलकर पैदल चलते हुए राजगृह नगर के बीच से निकलता है। निकलकर मुद्गरपाणि यक्ष के यक्षायतन के न अधिक दूर न अधिक समीप से जहाँ गुणशील उद्यान था, जहाँ श्रमण भगवान महावीर थे, वहाँ जाने के लिए तत्पर हुआ।

आध्यात्मिक शक्ति के समक्ष यक्ष की शक्ति पराजित

82. **तए णं से मोग्गरपाणी जक्खे सुदंसणं समणोवासयं अदूर सामंतेणं वीईवयमाणं-वीईवयमाणं पासइ पासित्ता आसुरूत्ते रूट्ठे कुविए चंडिक्किए मिसिमिसेमाणे तं पलसहस्सणिप्फण्णं अओमयं मोग्गरं उल्लालेमाणे-उल्लालेमाणे जेणेव सुदंसणे समणोवासए तेणेव पहारेत्थ गमणाए। तए णं से सुदंसणे समणोवासए मोग्गरपाणिं जक्खं एज्जमाणं पासइ पासित्ता अभीए अतत्थे अणुव्विग्गे अक्खुभिए अचलिए असंभंते वत्थंतेणं भूमिं पमज्जइ, पमज्जित्ता करयलपरिग्गहियं दसणहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी -**

'णमोत्थुणं अरहंताणं जाव संपत्ताणं। णमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स आइगरस्स तित्थयरस्स जाव संपाविउकामस्स। पुव्विं पि णं मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए थूलए पाणाइवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए, थूलाए मुसावाए, थूलाए अदिण्णादाणे सदारसंतोसे कए जावज्जीवाए, इच्छापरिमाणे कए जावज्जीवाए। तं इदाणिं पि णं तस्सेव अंतियं सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामि जावज्जीवाए, मुसावायं अदत्तादाणं मेहुणं परिग्गहं पच्चक्खामि जावज्जीवाए, सव्वं कोहं जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि जावज्जीवाए, सव्वं असणं पाणं खाइमं साइमं चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि जावज्जीवाए जइ णं एत्तो उवसग्गाओ मुच्चिस्सामि तो मे कप्पइ पारित्तए। अह णं एत्तो उवसग्गाओ ण मुच्चिस्सामि, 'तो मे तहा' पच्चक्चखाए चेव त्ति कट्टु सागारं पडिमं पडिवज्जइ।

तए णं से मोग्गरपाणी जक्खे त्तं पलसहस्सणिप्फण्णं अओमयं मोग्गरं उल्लालेमाणे-उल्लालेमाणे जेणेव सुदंसणे समणोवासए तेणेव उवागए। णो चेव णं संचाएइ सुदंसणं समणोवासयं तेयसा समभिपडित्तए।

तब वह मुद्गरपाणि यक्ष न अति दूर एवं न अति समीप से गमन करते हुए सुदर्शन श्रमणोपासक को देखता है, देखकर शीघ्र ही क्रुद्ध हुआ, रोषयुक्त हुआ, कुपित हुआ, चण्ड यानी भयंकर रूप को धारण करके दांत पीसते हुए उस एक हजार पल के भारी लोहे के मुद्गर को आकाश में घुमाते-घुमाते जिधर सुदर्शन श्रमणोपासक था, उधर जाने में प्रवृत्त हुआ। उस समय वह सुदर्शन श्रमणोपासक मुद्गरपाणि यक्ष को आते हुए देखता है, देखकर बिना डरे, बिना त्रस्त हुए, बिना उद्विग्न हुए, बिना क्षुभित हुए, बिना विचलित हुए, बिना व्याकुल हुए

वस्त्र के किनारे से भूमि को पूंजता है, पूंजकर हाथ जोड़कर दसों नख मिलाकर, सिर के चारों ओर आवर्तन देते हुए मस्तक पर अंजलि लगाकर इस प्रकार कहने लगा-

'अरिहंतों को, भगवन्तों को, धर्म की आदि करने वालों को, तीर्थंकरों को यावत् सिद्ध गति को संप्राप्त जिनेश्वर देवों को नमस्कार हो। आदिकर, तीर्थंकर यावत् सिद्ध गति को प्राप्त करने वाले श्रमण भगवान महावीर को नमस्कार हो। पहले भी मैंने श्रमण भगवान महावीर के समीप स्थूल प्राणातिपात का यावज्जीवन हेतु प्रत्याख्यान लिया था- स्थूल मृषावाद, स्थूल अदत्तादान का यावज्जीवन हेतु प्रत्याख्यान किया था। जीवन पर्यन्त स्वदारसंतोष एवं इच्छा परिणाम व्रत को स्वीकार किया था। अब भी मैं उन्हीं श्रमण भगवान महावीर की साक्षी से जीवन पर्यन्त के लिए सम्पूर्ण प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, यावत् मिथ्यादर्शन शल्य का प्रत्याख्यान करता हूं, सम्पूर्ण अशन, पान, खादिम, स्वादिम चारों प्रकार के आहार का यावज्जीवन प्रत्याख्यान करता हूं। यदि इस उपसर्ग से छूट जाऊंगा तो मुझे प्रत्याख्यान पारना कल्पता है। यदि इस उपसर्ग से नहीं छूटा तो मेरे ये प्रत्याख्यान इसी रूप में रहेंगे।' इस प्रकार आगार सहित प्रतिमा को स्वीकार कर लेते हैं।

तब वह मुद्गरपाणि यक्ष उस हजार पल के भारी लोहे के बने मुद्गर को घुमाता हुआ जहाँ सुदर्शन श्रमणोपासक था वहाँ आ पहुंचा किन्तु सुदर्शन श्रमणोपासक को अपने तेज से पराभूत करने में समर्थ नहीं हुआ।

मुद्गरपाणि यक्ष का पलायन

83. तए णं से मोग्गरपाणी जक्खे सुदंसणं समणोवासयं सव्वओ समंता परिघोलेमाणे परिघोलेमाणे जाहे नो चेव णं संचाएइ सुदंसणं समणोवासयं तेयसा समभिपडित्तए, ताहे सुदंसणस्स समणोवासयस्स पुरओ संपक्खिं सपडिदिसिं ठिच्चा सुदंसणं समणोवासयं अणिमिसाए दिट्ठीए सुचिरं निरिक्खइ, निरिक्खित्ता अज्जुणयस्स मालागारस्स सरीरं विप्पजहइ, विप्पजहित्ता तं पलसहस्स णिप्फण्णं अयोमयं मोग्गरं गहाय जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए।

तए णं से अज्जुणए मालागारे मोग्गरपाणिणा जक्खेणं विप्पमुक्के समाणे 'धस' त्ति धरणितलंसि सव्वंगेहिं निवडिए। तए णं से सुदंसणे समणोवासए 'निरूवसग्ग' मित्ति कट्टु पडिमं पारेइ।

फिर वह मुद्गरपाणि यक्ष सुदर्शन श्रमणोपासक के चारों ओर घूमते-घूमते जब सुदर्शन श्रमणोपासक को अपने तेज से पराभूत करने में समर्थ नहीं हुआ तब सुदर्शन श्रमणोपासक के सामने बिल्कुल सीध में खड़ा होकर सुदर्शन श्रमणोपासक को अपलक दृष्टि से काफी समय तक एकटक देखता है, देखकर अर्जुन माली के शरीर को छोड़ देता है, छोड़कर उस एक हजार पल से बने हुए लोहे के मुद्गर को लेकर जिस दिशा से आया था, उसी दिशा में लौट गया।

तब वह अर्जुन माली मुद्गरपाणि यक्ष के द्वारा छोड़ दिए जाने पर धस करके पृथ्वी पर सम्पूर्ण अंगों के साथ गिर पड़ा। तब वह सुदर्शन श्रमणोपासक 'उपसर्ग समाप्त हो गया' ऐसा जानकर प्रतिमा को पार लेता है।

सुदर्शन के साथ अर्जुन का प्रभु वन्दनार्थ गमन

84. तए णं से अज्जुणए मालागारे तओ मुहूत्तंतरेणं आसत्थे समाणे उट्ठेइ उट्ठेत्ता सुदंसणं समणोवासयं एवं वयासी -

'तुब्भे णं देवाणुप्पिया! के कहिं वा संपत्थिया?'

तए णं से सुदंसणे समणोवासए अज्जुणयं मालागारं एवं वयासी-

'एवं खलु देवाणुप्पिया! अहं सुदंसणे णामं समणोवासए अभिगय - जीवाजीवे गुणसिलए चेइए समणं भगवं महावीरं वंदिउं संपत्थिए।'

तए णं से अज्जुणए मालागारे सुदंसणं समणोवासयं एवं वयासी-

'तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया अहमवि तुमए सद्धिं समणं भगवं महावीरं वंदित्तए जाव पज्जुवासित्तए।'

अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेहि।

तए णं सुदंसणे समणोवासए अज्जुणएणं मालागारेणं सद्धिं जेणेव गुणसिलए चेइए, जेणेव समणे भगवं महावीरे, तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता अज्जुणएणं मालागारेणं सद्धिं समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव पज्जुवासइ।

तए णं समणे भगवं महावीरे सुदंसणस्स समणोवासगस्स अज्जुणयस्स मालागारस्स तीसे य महइमहालियाए परिसाए मज्झगए विचित्तं धम्ममाइक्खइ। सुदंसणे पडिगए।

कुछ समय बाद स्वस्थ होकर अर्जुन माली वहाँ से उठता है, उठकर सुदर्शन श्रमणोपासक को इस प्रकार कहने लगा-

देवानुप्रिय! आप कौन हैं और कहाँ जाने हेतु रवाना हुए हैं?'

तब वह सुदर्शन श्रमणोपासक अर्जुन माली को इस प्रकार कहने लगा-

'देवानुप्रिय! मैं जीव, अजीव के स्वरूप को जानने वाला सुदर्शन नामक श्रमणोपासक हूँ एवं गुणशीलक उद्यान में विराजमान श्रमण भगवान महावीर को वन्दना करने हेतु रवाना हुआ हूं।

तब उस अर्जुन माली ने सुदर्शन श्रमणोपासक को ऐसा कहा-

'देवानुप्रिय! मैं भी आपके साथ श्रमण भगवान महावीर को वन्दना करने यावत् पर्युपासना करने जाना चाहता हूं।'

सुदर्शन श्रमणोपासक- 'देवानुप्रिय! जिससे सुख हो। प्रतिबंध मत करो।

फिर सुदर्शन श्रमणोपासक अर्जुन मालाकार के साथ जहाँ गुणशीलक उद्यान था, जहाँ श्रमण भगवान महावीर थे, वहाँ पहुंचता है, पहुंचकर अर्जुन माली के साथ श्रमण भगवान महावीर को तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिणा करके वंदन नमस्कार करता है यावत् पर्युपासना करता है।

उस समय श्रमण भगवान महावीर सुदर्शन श्रमणोपासक को, अर्जुन मालाकार को एवं उस विशाल परिषद् के मध्य विभिन्न प्रकार से धर्म का उपदेश देते हैं। सुदर्शन अपने स्थान पर लौट जाते हैं।

अर्जुन माली-प्रव्रज्या के पथ पर

85. **तए णं से अज्जुणए मालागारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं-पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता**

णमंसित्ता एवं वयासी -

'सद्दहामि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं जाव अब्भुट्ठेमि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं।'

'अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेहि।'

तए णं से अज्जुणए मालागारे उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अवक्कमई, अवक्कमित्ता सयमेव पंचमुट्ठिय लोयं करेइ, करित्ता जाव विहरइ।

तए णं से अज्जुणए अणगारे जं चेव दिवसं मुण्डे जाव पव्वइए तं चेव दिवसं समणं भगवं महावीरं वंदइ, णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता इमं एयारूवं अभिग्गहं उगिण्हइ-कप्पइ मे जावज्जीवाए छट्ठं छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणस्स विहरित्तए त्ति कट्टु अयमेयारूवं अभिग्गहं ओगिण्हइ-ओगिण्हित्ता जावज्जीवाए जाव विहरइ।

तए णं से अज्जुणए अणगारे छट्ठक्खमणपारणयंसि पढमाए पोरिसीए सज्झायं करेइ, जाव अडइ।

तदनन्तर वह अर्जुन माली श्रमण भगवान महावीर के पास धर्म को सुनकर, जानकर, प्रसन्न एवं संतुष्ट होकर श्रमण भगवान महावीर की तीन बार आदक्षिण-प्रदक्षिणा करता है, करके वन्दन नमस्कार करता है, वन्दन नमस्कार करके इस प्रकार कहने लगा-

'भंते! मैं निर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा करता हूं, प्रतीति एवं रुचि करता हूँ यावत् मैं इसी निर्ग्रन्थ प्रवचन में तत्परता पूर्वक उपस्थित होना चाहता हूं।

प्रभु ने फरमाया-देवानुप्रिय! जिससे सुख हो, प्रतिबन्ध (किसी

भी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव पर आसक्ति) मत करना।

तब वह अर्जुन मालाकार उत्तर पूर्व दिशा की ओर हटता है, हटकर स्वयं ही पंचमुष्टि लोच करता है, करके प्रभु के समक्ष खड़ा होकर प्रव्रज्या प्रदान करने हेतु निवेदन करता है, यावत् प्रव्रजित होकर समिति गुप्ति की आराधनापूर्वक तप संयम से आत्मा को भावित करते हुए विचरण करने लगते हैं।

वे अर्जुन अनगार जिस दिन मुण्डित होकर प्रव्रजित हुए उसी दिन श्रमण भगवान महावीर को वन्दन नमस्कार करते हैं, वन्दन नमस्कार करके वह इस प्रकार का अभिग्रह करते हैं- मुझे जीवन पर्यन्त बीच में छोड़े बिना बेले-बेले की तपस्या से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरण करना कल्पता है। इस तरह का यह अभिग्रह जीवन पर्यन्त के लिए स्वीकार करते हैं। स्वीकार करके संयम एवं तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरण करते हैं।

तदनन्तर बेले के पारणे के दिन वे अर्जुन अनगार प्रथम प्रहर में स्वाध्याय करते हैं। दूसरे प्रहर में ध्यान करते हैं। तीसरे प्रहर में पात्र, झोली आदि की प्रतिलेखना करके भगवान महावीर से अनुमति लेकर राजगृह नगर के उच्च, निम्न एवं मध्यम कुलों में भिक्षाटन करते हैं।

अद्भुत सहिष्णुता से अर्जुन अनगार की मुक्ति

86. **तए णं तं अज्जुणयं अणगारं रायगिहे णयरे उच्च जाव अडमाण बहवे इत्थीओ य पुरिसा य डहरा य महल्ला य जुवाणा य एवं वयासी -**

'इमेणं मे पिता मारिए! इमेणं मे माता मारिया। इमेणं मे माया भगिणी भज्जा पुत्ते धूया सुण्हा इमेणं मे अण्णयरे सयणसंबंधि-

परियणे मारिए त्ति कट्टु अप्पेगइया अक्कोसंति अप्पेगइया हीलंति णिदंति खिसंति गरिहंति तज्जंति तालेंति।'

तए णं से अज्जुणए अणगारे तेहिं बहूहिं इत्थीहि य पुरिसेहि य डहरेहि य महल्लेहि य जुवाणएहि य आओसिज्जमाणे जाव तालेज्जमाणे तेसिं मणसा वि अप्पउस्समाणे सम्मं सहइ, सम्मं खमइ सम्मं तितिक्खइ सम्मं अहियासेइ, सम्मं सहमाणे सम्मं खममाणे सम्मं तितिक्खमाणे सम्मं अहियासेमाणे रायगिहे णयरे उच्चणीय-मज्झिय-कुलाइं अडमाणे जइ भत्तं लभई तो पाणं न लभई, अह पाणं लभइ तो भत्तं न लभइ।

उस समय राजगृह नगर में उच्च, निम्न एवं मध्यम कुलों में भिक्षार्थ भ्रमण करते हुए उन अर्जुन अनगार को अनेक स्त्रियां, पुरुष, बालक, वृद्ध एवं युवक इस प्रकार कहने लगे-

इसने मेरे पिता को मारा है। इसने मेरी माता को मारा है। इसने मेरे भाई, बहन, पत्नी, पुत्र, पुत्री, पुत्रवधू को अथवा किसी स्वजन, सम्बन्धी या परिजन को मारा है। इस तरह अनेक व्यक्ति उन अर्जुन अनगार पर आक्रोश करते हैं, अनेक उनकी हीलना, निंदा, खिंसा, गर्हा, तर्जना (फटकारना) एवं ताड़ना (पीटना) करते हैं।

तब वे अर्जुन अनगार उन अनेक स्त्रियों, पुरुषों, बालकों, वृद्धों, युवाओं द्वारा आक्रोश, हीलना, निंदा, खिंसा, गर्हा, तर्जना, ताड़ना किए जाने पर इनके प्रति मन से भी प्रद्वेष न करते हुए सम्यक् प्रकार से यानी भयभीत न होते हुए सहन करते हैं, क्रोध न करके सम्यक् प्रकार से क्षमा करते हैं, दीनता न लाते हुए सम्यक् प्रकार से तितिक्षा करते हैं, सम्यक् रूप से अधिकाधिक सहन करते हैं, सम्यक् प्रकार से सहन करते हुए सम्यक् प्रकार से क्षमा करते हुए, सम्यक्

प्रकार से तितिक्षा करते हुए सम्यक् प्रकार से अधिकाधिक सहन करते हुए राजगृह नगर में उच्च, निम्न एवं मध्यम कुलों में भिक्षाटन करते हुए यदि आहार पाते हैं तो पानी नहीं पाते हैं, यदि पानी पाते हैं तो आहार नहीं पाते हैं।

87. **तए णं से अज्जुणए अणगारे अदीणे अविमणे अकलुसे अणाइले अविसाइ अपरितंतजोगी अडइ अडित्ता रायगिहओ णयराओ पडिणिक्खमइ पडिणिक्खमित्ता जेणेव गुणसिलए चेइए, जेणेव समणे भगवं महावीरे जाव पडिदंसेइ, पडिदंसेत्ता समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भुणुण्णाए समाणे अमुच्छिए अगिद्धे अगढिए अणज्झोववण्णे बिलमिव पण्णगभूएणं अप्पाणेणं तमाहारं आहारेइ। तए णं समणे भगवं महावीरे अण्णया रायगिहाओ पडिणिक्खमई पडिणिक्खमित्ता बहिया जणवय विहारं विहरइ।**

तए णं से अज्जुणए अणगारे तेणं ओरालेणं विपुलेणं, पयत्तेणं पग्गहिएणं महाणुभागेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणे बहुपडिपुण्णे छम्मासे सामण्ण परियागं पाउणइ पाउणित्ता अद्धमासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसेइ झूसेत्ता तीसं भत्तइं अणसणाए छेदेइ छेदेत्ता, जस्सट्ठाए कीरइ णग्गभावे जाव सिद्धे।

तब भी वे शोक न करते हुए अदीन, शून्यचित्त न होने से अविमन, द्वेष से रहित होने से अकलुष, क्षोभ न होने से अनाविल 'मेरे जिन्दे रहने से क्या लाभ' इत्यादि रूप चिंता न करने से अविषादी, सतत समाधि युक्त होने से अपरितंतयोगी अर्जुन अनगार राजगृह नगर से लौटते हैं, लौटकर जहाँ गुणशीलक उद्यान था, जहाँ श्रमण भगवान महावीर थे, वहाँ पहुंचकर भगवान महावीर को प्राप्त आहार दिखलाते

हैं, दिखलाकर श्रमण भगवान महावीर द्वारा अनुज्ञा मिलने पर मूर्च्छारहित होकर, गृद्धि रहित होकर अलोलुप होकर अनासक्त रूप से जैसे सर्प बिल में सीधा प्रवेश करता है, उसी प्रकार रागरहित होने से मुख में स्वाद के लिए इधर-उधर स्पर्श कराए बिना सीधा उस आहार को कर लेते हैं। फिर अन्य किसी समय श्रमण भगवान महावीर राजगृह नगर से बाहर निकले, निकलकर बाहर जनपद में विचरण करने लगे।

तब वे अर्जुन अनगार उस प्रधान, विपुल, अनुज्ञात, प्रकर्ष भावों से गृहित महान् अनुभाव वाले तपश्चरण से आत्मा को भावित करते हुए लगभग छह महीने तक श्रमण पर्याय का पालन करते हैं, करके अर्धमास की संलेखना से आत्मा को आराधित करते हैं। करके तीस भक्तों का अनशन रूप से छेदन करते हैं। यानी तीस भक्तों तक (15 अहोरात्र तक) आहार का त्याग करते हैं, करके जिस उद्देश्य से नग्नत्व, मुंडत्व आदि को स्वीकार किया जाता है इस उद्देश्य को प्राप्त करके सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हो जाते हैं।

4-14 अध्ययन

अनेक गाथापतियों द्वारा संयम पालन एवं मुक्ति

88. **तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णयरे, गुणसिलए चेइए। सेणिए राया, कासवे णामं गाहावई परिवसइ। जहा मंकाई। सोलस वासा परियाओ। विपुले सिद्धे।**

एवं - खेमए वि गाहावई, णवरं- कायंदी णयरी। सोलस वासा परियाओ विपुले पव्वए सिद्धे।

एवं - धिइहरे वि गाहावई कायंदीए णयरीए। सोलस वासा परियाओ विपुले सिद्धे।

एवं - केलासे वि गाहावई - णवरं - साएए णयरे। बारस वासाइं परियाओ विपुले सिद्धे।

एवं - हरिचंदणे वि गाहावई - साएए णयरे। बारस वासा परियाओ विपुले सिद्धे।

एवं - वारत्तए वि गाहावई - णवरं - रायगिहे णयरे। बारस वासा परियाओ। विपुले सिद्धे।

एवं सुदंसणे वि गाहावई - णवरं वाणियग्गामे णयरे दुइपलास चेइए। पंच वासा परियाओ। विपुले सिद्धे।

एवं - पुण्णभद्दे वि गाहावई - वाणियग्गामे णयरे। पंच वासा परियाओ विपुले सिद्धे।

एवं - सुभणभद्दे वि गाहावई - सावत्थीए णयरीए। बहुवासाइं परियाओ। विपुले सिद्धे।

एवं - सुपइट्ठे वि गाहावई सावत्थीए णयरीए। सत्तावीसं वासा परियाओ। विपुले सिद्धे।

एवं - मेहे वि गाहावई रायगिहे णयरे। बहूहिं वासाइं परियाओ विपुले सिद्धे।

उस काल उस समय में राजगृह नगर था। उसके बाहर ईशान कोण में गुणशीलक नामक उद्यान था। उस नगर में श्रेणिक राजा राज्य करते थे। वहाँ काश्यप नाम के एक सद्गृहस्थ रहते थे। मंकाई की तरह ही काश्यप गाथापति ने भी प्रभु महावीर की देशना सुनकर वैराग्य भाव को प्राप्त किया। ज्येष्ठ पुत्र को उत्तरदायित्व सौंपकर उन्होंने भी प्रभु चरणों में प्रव्रज्या स्वीकार की। सोलह वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन किया व अन्ततः विपुल पर्वत पर संथारा करके सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुए।

इसी प्रकार कांकदी नगरी में रहने वाले क्षेमक गाथापति का वर्णन है जिन्होंने दीक्षा लेकर सोलह वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन किया तथा विपुल पर्वत पर सिद्ध हुए।

इसी प्रकार कांकदी नगरी के धृतिधर गाथापति ने प्रव्रज्या स्वीकार करके सोलह वर्षों तक दीक्षा पर्याय का पालन किया तथा विपुल पर्वत पर सिद्ध हुए।

इसी प्रकार साकेत नगर के कैलाश गाथापति ने श्रमण प्रभु महावीर के चरणों में प्रव्रज्या स्वीकार करके बारह वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन किया व अंत में विपुल पर्वत पर संथारा ग्रहण करके सिद्ध हुए।

साकेत नगर के हरिचंदन गाथापति ने भी इसी प्रकार प्रव्रजित होकर बारह वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन किया व विपुल पर्वत पर सिद्धि प्राप्त की।

राजगृह नगर के वारतक गाथापति ने भी इसी भांति दीक्षित होकर बारह वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन किया व अन्ततः विपुल पर्वत पर सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुए।

वाणिज्यग्राम नगर के बाहर द्युतिपलाश नामक उद्यान था। उस नगर के निवासी सुदर्शन नामक गाथापति ने श्रमण भगवान महावीर की भव्य देशना को श्रवण करके प्रतिबुद्ध होकर प्रव्रज्या स्वीकार की। पाँच वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन करके विपुल पर्वत पर सिद्धि प्राप्त की।

ऐसे ही वाणिज्यग्राम नगर निवासी पूर्णभद्र गाथापति ने प्रव्रजित होकर पांच वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन किया तथा विपुल पर्वत पर संथारा ग्रहण करके सिद्धि प्राप्त की।

श्रावस्ती नगरी के सुमनभद्र गाथापति ने प्रव्रज्या ग्रहण करने के अनन्तर अनेक वर्षों तक श्रमण पर्याय का आराधन किया व विपुल पर्वत पर सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुए।

इसी प्रकार श्रावस्ती नगरी के सुप्रतिष्ठ गाथापति ने सत्ताईस वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन करके विपुल गिरि पर सिद्धि को प्राप्त किया।

राजगृह नगर के मेघ गाथापति ने भी इसी प्रकार अनेक वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन किया व विपुल पर्वत पर सिद्ध हुए।

15 वां अध्ययन

पोलासपुर के अतिमुक्त कुमार

89- तेणं कालेणं तेणं समएणं पोलासपुरे णयरे। सिरिवणे उज्जाणे। तत्थ णं पोलासपुरे णयरे विजए णामं राया होत्था। तस्स णं विजयस्स रण्णो सिरी णामं देवी होत्था, वण्णओ। तस्स णं विजयस्स रण्णो। पुत्ते सिरीए देवीए अत्तए अइमुत्ते णामं कुमारे होत्था, सुकुमालपाणिपाए।

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जाव विहरइ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई अणगारे जहा पण्णत्तीए जाव पोलासपुरे णयरे उच्च जाव अडइ।

इमं च णं अइमुत्ते कुमारे ण्हाए जाव सव्वालंकारविभूसिए बहूहिं दारगेहिं य दारियाहिं य डिंभएहिं य डिंभियाहिं य कुमारएहिं य कुमारियाहिं य सद्धिं संपरिवुडे साओ गिहाओ पडिणिक्खमई,

पाडिणिक्खमित्ता जेणेव इंदट्ठाणे तेणेव उवागए तेहिं बहूहिं दारएहिं य संपुरिवुडे अभिरममाणे-अभिरममाणे विहरइ। तए णं भगवं गोयमे उच्च जाव अडमाणे इंदट्ठाणस्स अदूरसामंतेणं वीईवयइ।

उस काल उस समय में पोलासपुर नामक नगर था। उसके बाहर श्रीवन नामक उद्यान था। उस पोलासपुर नगर में विजय नाम का राजा था। उस विजय राजा के श्री नाम की महारानी थी। वह सुकुमाल हाथ पैर वाली यावत् अनेक लक्षणों से सम्पन्न थी। उस विजय राजा का पुत्र एवं श्री महारानी का आत्मज अतिमुक्त नामक कुमार था। उसके कर-चरण सुकुमाल थे।

उस काल उस समय में श्रमण भगवान महावीर ग्रामानुग्राम विचरते हुए पोलासपुर नगर के बाहर श्रीवन उद्यान में पधारकर अनुज्ञा ग्रहण करके विराजमान हुए।

उस काल उस समय में श्रमण भगवान महावीर के ज्येष्ठ शिष्य इन्द्रभूति गौतम अनगार बेले के पारणे के दिन भगवान महावीर से अनुज्ञा लेकर पोलासपुर नगर में उच्च, निम्न व मध्यम कुलों में भिक्षार्थ भ्रमण करते हैं।

इधर अतिमुक्त कुमार स्नान करके यावत् सभी अलंकारों से विभूषित होकर अनेक बालकों, बालिकाओं, बच्चों, बच्चियों, कुमारों एवं कुमारियों से घिरा हुआ अपने घर से निकलता है। निकलकर जहाँ इन्द्रस्थान (इन्द्र महोत्सव में जहाँ इन्द्रयष्टि को ऊंचा किया जाता है, ऐसा मैदान रूप स्थान) था, वहाँ आया व उन अनेक बालकों आदि के साथ क्रीड़ा करने लग जाता है। उस समय भगवान गौतम स्वामी उच्च, निम्न, मध्यम कुलों में सामुदानिक भिक्षा हेतु घूमते हुए इन्द्रस्थान के न अधिक दूर एवं न अति समीप से यानी कुछ फासले से निकलते हैं।

अतिमुक्त कुमार का गौतम अनगार के प्रति आकर्षण

90. तए णं से अइमुत्ते कुमारे भगवं गोयमं अदूरसामंतेणं वीईवयमाणं पासइ, पासित्ता जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागए, भगवं गोयमं एवं वयासी -

'के णं भंते! तुब्भे? किं वा अडह?'

तए णं भंते गोयमे अइमुत्तं कुमारं एवं वयासी - 'अम्हे णं देवाणुप्पिया - समणा णिग्गंथा इरिया - समिया जाव गुत्तबंभयारी उच्च जाव अडामो।'

तए णं अइमुत्ते कुमारे भगवं गोयमं एवं वयासी -

'एह णं भंते! तुब्भे जा णं अहं तुब्भं भिक्खं दवावेमि' त्ति कट्टु भगवं गोयमं अंगुलीए गिण्हइ, गिण्हित्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवागए। तए णं सा सिरिदेवी भगवं गोयमं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठा आसणाओ अब्भुट्ठेई, अब्भुट्ठित्ता जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागया। भगवं गोयमं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ, णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता विउलेणं असण-पाण-खाइम साइमेणं पडिलाभेइ, पडिलाभित्ता पडिविसज्जेइ।

तब वह अतिमुक्त कुमार भगवान गौतम को कुछ दूरी पर से ही गमन करता हुआ देखता है, देखकर जहाँ भगवान गौतम थे, वहाँ आया एवं भगवान गौतम को इस प्रकार कहने लगा-

'भंते! आप कौन हैं तथा क्यों घूम रहे हैं?'

तब भगवान गौतम अतिमुक्त कुमार को इस प्रकार कहते हैं -

'देवानुप्रिय! हम ईर्या समिति, भाषा समिति, एषणा समिति,

आदानभण्डमात्र निक्षेपणा समिति, उच्चार प्रश्रवण खेल जल्लसिंघाण परिष्ठापना समिति का पालन करने वाले, मन, वचन, काया से गुप्त, इन्द्रियों को गुप्त रखने वाले तथा ब्रह्मचर्य से गुप्त श्रमण निर्ग्रन्थ हैं तथा उच्च, निम्न, मध्यम कुलों में भिक्षार्थ परिभ्रमण कर रहे हैं।'

तब अतिमुक्त कुमार ने भगवान गौतम को ऐसा कहा- भंत्ते! आप आइए जिससे मैं आपको भिक्षा दिलवाता हूं। ऐसा कहकर भगवान गौतम को अंगुली से पकड़ता है, पकड़कर जहाँ अपना घर था, वहाँ आया। उस वक्त वह श्रीदेवी भगवान गौतम को आते हुए देखती है, देखकर हर्षित एवं प्रसन्न होकर आसन से उठती है, उठकर जहाँ भगवान गौतम थे वहाँ आई, भगवान गौतम को तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिणा करती है, करके वन्दना नमस्कार करती है, वन्दना नमस्कार करके विपुल अशन पान खादिम स्वादिम बहरा कर प्रतिलाभित होती है। प्रतिलाभित होकर उन्हें विदा करती है।

91. **तए णं से अइमुत्ते कुमारे भगवं गोयमं एवं वयासी - 'कहि णं भंते! तुब्भे परिवसह?**

'तए णं से भगवं गोयमे अइमुत्तं कुमारं एवं वयासी- 'एवं खलु देवाणुप्पिया! मम धमायरिए धम्मोवदेसए समणे भगवं महावीरे आइगरे जाव संपाविउकामे इहेव पोलासपुरस्स णयरस्स बहिया सिरिवणे उज्जाणे अहापडिरूवं उग्गहं उगिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। तत्थ णं अम्हे परिवसामो।'

तदनन्तर वह अतिमुक्त कुमार भगवान गौतम को इस प्रकार कहने लगे- 'भंत्ते! आप कहाँ रहते हैं?'

तब वे भगवान गौतम अतिमुक्त कुमार को इस प्रकार कहते हैं- देवानुप्रिय! मेरे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक, धर्म की आदि करने

वाले, तीर्थंकर यावत् सिद्ध गति को प्राप्त करने वाले श्रमण भगवान महावीर यहीं पोलासपुर नगर के बाहर श्रीवन उद्यान में मर्यादा के अनुसार ठहरने की अनुज्ञा प्राप्त करके संयम एवं तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरते हैं। मैं वहीं रह रहा हूं।

प्रभु वन्दना को उत्कण्ठित अतिमुक्त कुमार

92- **तए णं से अइमुत्ते कुमारे भगवं गोयमं एवं वयासी- 'गच्छामि णं अहं तुब्भेहिं सद्धिं समणं भगवं महावीरं पायवंदए।'**

'अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह।'

तए णं से अइमुत्ते कुमारे भगवया गोयमेणं सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं - पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ जाव पज्जुवासइ।

तए णं भगवं गोयमे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागए जाव पडिदंसेइ, पडिदंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। तए णं समणे भगवं महावीरे अइमुत्तस्स कुमारस्स तीसे य धम्मकहा।

फिर वह अतिमुक्त कुमार भगवान गौतम को ऐसा कहने लगा- मैं भी आपके साथ श्रमण भगवान महावीर की चरण वन्दना हेतु चलता हूँ।

देवानुप्रिय! जिससे तुम्हें सुख हो। प्रतिबंध मत करना। गौतम स्वामी ने उत्तर दिया।

इसके पश्चात् वह अतिमुक्त कुमार भगवान गौतम के साथ जहाँ श्रमण भगवान महावीर थे, वहाँ आता है, आकर श्रमण भगवान

महावीर को तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिणा करता है, करके वन्दना करता है। यावत् पर्युपासना करता है।

तब भगवान गौतम जहाँ श्रमण भगवान महावीर थे, वहाँ पहुंचे गमनागमन का प्रतिक्रमण किया यावत् लाया हुआ आहार, पानी भगवान महावीर को दिखलाते हैं, दिखलाकर संयम एवं तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगते हैं। उस समय श्रमण भगवान महावीर अतिमुक्त कुमार और उस विशाल परिषद् को धर्मकथा फरमाते हैं।

अतिमुक्त कुमार का माता से दार्शनिक संवाद

93. **तए णं से अइमुत्ते कुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठे एवं वयासी सद्दहामि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं जाव जं णवरं - देवाणुप्पिया! अम्मापियरो आपुच्छामि तए णं अहं देवाणुप्पियाणं अंतिए जाव पव्वयामि।**

अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेह।

तए णं से अइमुत्ते कुमारे जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवागए जाव पव्वइत्तए।

तब उस अतिमुक्त कुमार ने श्रमण भगवान महावीर के समीप धर्म को सुनकर एवं धारण करके हर्षित व प्रसन्न होकर कहा- 'भंते! मैं निर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा करता हूं, प्रतीति करता हूं, रुचि करता हूं, यावत् देवानुप्रिय! मैं माता-पिता से अनुमति प्राप्त करूंगा, तब मैं आप देवानुप्रिय के समीप मुण्डित होकर प्रव्रजित होऊंगा।

भगवान महावीर- 'देवानुप्रिय! जिससे तुम्हें सुख हो। प्रतिबंध मत करना।

तब वह अतिमुक्त कुमार जहाँ माता-पिता थे, वहाँ आया यावत् माता-पिता से प्रव्रज्या ग्रहण करने की अनुमति मांगने लगा।

94. **तए णं तं अइमुत्तं कुमारं अम्मापियरो एवं वयासी - बाले सि ताव तुमं पुत्ता! असंबुद्धे सि तुमं पुत्ता। किं णं तुमं जाणसि धम्मं?**

तए णं से अइमुत्ते कुमारे अम्मापियरो एवं वयासी - 'एवं खलु अहं अम्मयाओ! जं चेव जाणामि, तं चेव ण जाणामि जं चेव ण जाणामि तं चेव जाणामि।'

तए णं तं अइमुत्तं कुमारं अम्मापियरो एवं वयासी - 'कहं णं तुमं पुत्ता! जं चेव जाणसि जाव तं चेव ण जाणसि?'

तए णं से अइमुत्ते कुमारे अम्मापियरो एवं वयासी -

'जाणामि अहं अम्मयाओ! जहा जाएणं अवस्स मरियव्वं, ण जाणामि अहं अम्मयाओ! काहे वा कहिं वा कहं वा कियच्चिरेण वा? ण जाणामि णं अम्मयाओ! केहिं कम्माययणेहिं जीवा णेरइयतिरिक्खजोणिय - मणुस्स देवेसु उववज्जंति, जाणामि णं अम्मयाओ! जहा सएहिं कम्माययणेहिं जीवा णेरइय जाव उववज्जंति एवं खलु अहं अम्मयाओ! जं चेव जाणामि तं चेव ण जाणामि, जं चेव ण जाणामि तं चेव जाणामि। तं इच्छामो णं अम्मयाओ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए जाव पव्वइत्तए।'

तए णं तं अइमुत्तं कुमारं अम्मापियरो जाहे णो संचाएंति बहूहिं आघवणाहिं जाव तं इच्छामो ते जाया। एगदिवसमवि रायसिरि पासेत्तए। तए णं से अइमुत्ते कुमारे अम्मापिउवयणमणुयत्तमाणे तुसिणिए संचिट्ठइ। अभिसेओ जहा महाबलस्स। णिक्खमणं।

जाव सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ। बहूहिं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणइ, गुणरयणं तवोकम्मं जाव विपुले सिद्धे।[7]

तब उस अतिमुक्त कुमार को माता-पिता ने कहा-पुत्र! तुम अभी बालक हो। पुत्र! तुम अभी असंबुद्ध हो (समझते नहीं हो), तुम धर्म को क्या जानते हो?

तदनन्तर अतिमुक्त कुमार ने माता-पिता को कहा- मात-पिताओ! निश्चित रूप से मैं जिसे जानता हूं, उसे ही नहीं जानता हूँ तथा जिसे नहीं जानता हूँ उसे ही जानता हूं।

तब उस अतिमुक्त कुमार को माता-पिता ने कहा- पुत्र! किस कारण से तुम जिसे जानते हो, उसे ही नहीं जानते तथा जिसे नहीं जानते, उसे ही जानते हो?

फिर अतिमुक्त कुमार ने माता-पिता को कहा-

'माता-पिताओ! मैं जानता हूँ कि जन्मे हुए को अवश्य मरना होता है किन्तु मात-पिताओ! मैं नहीं जानता कि प्रभात आदि किस वेला (समय) में, किस स्थान में, किस प्रकार से तथा कितना समय बीत जाने पर मरना होता है। मात-पिताओ! मैं नहीं जानता कि किन कर्मस्थानों से जीव नैरयिक, तिर्यञ्चयोनि, मनुष्य और देवों में

अतिमुक्त कुमार श्रमण का श्रीमद् भगवतीसूत्र संबंधी पाठ

7. 'तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी अइमुत्ते णामं कुमारसमणे पगइभद्दए जाव विणीए। तए णं से अइमुत्ते कुमारसमणे अण्णया कयाइं महावुट्ठकायंसि णिवयमाणंसि कक्खपडिग्गहरयहरणमायाए बहिया संपट्ठिए विहाराए। तए णं से अइमुत्ते कुमारसमणे वाहयं वहमाणं पासइ पासित्ता मट्टियाए पालिं बंधइ बंधित्ता 'णाविया मे णाविया मे' णाविओ विव णावमयं पडिग्गहयं उदगंसि कट्टु पव्वाहमाणे पव्वाहमाणो अभिरमइ, तं च थेरा अदक्खु, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छिता

एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी अइमुत्ते कुमारसमणे कइहिं भवग्गणेहिं सिज्झिहिइ जाव अंतं केरेहिइ? अज्जो त्ति! समणे भगवं महावीरे ते थेरे एवं वयासी-एवं खलु अज्जो! मम अंतेवासी अइमुत्ते णामं कुमारसमणे पगई भद्दए जाव विणीए से णं अइमुत्ते कुमार समणे इमेणं चेद भवग्गहणेणं सिज्झिहिइ जाव अंतंकेरेहिइ, तं मा णं अज्जो! तुब्भे अइमुत्तं कुमारसमणं हीलेह णिंदह खिंसह गरहह अवमण्णह, तुब्भे णं देवाणुप्पिया! अइमुत्तं कुमारसमणं अगिलाए संगिण्हह अगिलाए उवगिण्हह अगिलाए-भत्तेणं पाणेणं विणएणं वेयावडियं करेह, अइमुत्ते णं कुमारसमणे, अंतकरे चेव अंतिमसरीरिए चेव। तए णं ते थेरा भगवंतो समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्त समाणा समणं भगवं महावीरं वंदंति णमंसंति अइमुत्तं कुमारसमणं अगिलाए संगिण्हंति जाव वेयावडियं करेंति।।

(श्रीमद् भगवती सूत्र श. 5 उ.4)

उस काल उस समय में श्रमण भगवान महावीर के अन्तेवासी अतिमुक्त नामक कुमार श्रमण थे जो प्रकृति से भद्र यावत् विनीत थे। उस समय वे अतिमुक्त कुमार श्रमण बहुत वर्षा के बरसने पर बगल में पात्र एवं रजोहरण लेकर बाहर शारीरिक चिंता से निवृत्त होने हेतु रवाना हुए। तब वे अतिमुक्त कमार श्रमण पानी का छोटा नाला बहता हुआ देखते है, देखकर मिट्टी से पानी की पाल बांधते है, बांधकर नाव के रूप में पात्र को पानी में डालकर 'मेरी नाव मेरी नाव' उस प्रकार उसे प्रवाहित करते हुए खेलने लगे। उसे स्थाविरों ने देखा एवं जहाँ श्रमण भगवान महावीर थे, वहाँ आते है, आकर इस प्रकार कहने लगे- भंत्ते! आप देवानुप्रिय के शिष्य अतिमुक्त नामक कुमार श्रमण कितने भवग्रहण करके सिद्ध, बुद्ध, कुक्त होंगे, परिनिर्माण को प्राप्त करेंगे एवं सभी दुःखों का अन्त करेंगे?

श्रमण भगवान महावीर उन स्थविरों को इस प्रकार फरमाने लगे- आर्यों! मेरा अन्तेवासी अतिमुक्त नामक कुमार श्रमणा जो प्रकृति से ही भद्र यावत् विनीत है, वह अतिमुक्त कुमार श्रमण इसी भव से सिद्ध, बुद्ध होगा यावत् सभी दुखों का अन्त करेगा। अतः आर्यों! तुम सब अतिमुक्त कुमार की अवहेलना, निंदा, खिंसा, गर्हा, अपमान मत करो। तुम सब अग्लान रुप से (बिना खेद के) उसका संग्रह करो (उसे संभालो), अग्लान रूप से उसका उपग्रह करो (उसे सहयोग करो) अग्लान रुप से आहार, पानी हे, अन्तिम शरीरी है। श्रमण भगवान महावीर द्वारा ऐसा फरमाए जाने पर वे स्थविर भगवन्त श्रमण भगवान महावीर को वन्दना नमस्कार करते है और अतिमुक्त कुमार श्रमण का अग्लान रुप से संग्रह करते है यावत् सेवा करते है।

उत्पन्न होते हैं किन्तु मैं जानता हूँ कि जीव अपने-अपने कर्मस्थानों से नैरयिक, तिर्यञ्चयोनि, मनुष्य व देवों में उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार से मात-पिताओ! मैं जिसे जानता हूं, उसे ही नहीं जानता हूँ तथा जिसे नहीं जानता हूं, उसे ही जानता हूँ। अतः मात-पिताओ! आपके द्वारा अनुज्ञा प्राप्त होने पर मैं प्रव्रजित होना चाहता हूं।

फिर जब माता-पिता अनेक कथनों, तर्कों, वितर्कों से अतिमुक्त कुमार को समझाने में समर्थ नहीं हुए तो उन्होंने कहा कि पुत्र! एक दिन के लिए ही सही, हम तुम्हारी राजा के रूप में शोभा देखना चाहते हैं। तब वह अतिमुक्त कुमार माता-पिता के वचनों का पालन करते हुए मौन रहता है। महाबल के समान अतिमुक्त कुमार का राज्याभिषेक किया गया। राजा अतिमुक्त ने रजोहरण एवं पात्र मंगवाने की तथा नाई को बुलवाने की आज्ञा दी। सम्पूर्ण विधि के अनुसार राजा अतिमुक्त ने प्रव्रज्या ग्रहण की।

प्रव्रजित होने पर अतिमुक्त अनगार ने सामायिक आवश्यक से प्रारंभ करके ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। अनेक वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन करते हैं। गुणरत्न, संवत्सर नामक तप की आराधना की यावत् अंत में विपुल पर्वत पर संथारा ग्रहण करके सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुए।

16 वां अध्ययन 'अलक्ष'

95. **तेणं कालेणं तेणं समएणं वाराणसी णयरी, काममहावणे चेइए। तत्थ णं वाराणसीए अलक्खे णामं राया होत्था।**

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जाव विहरइ,

परिसा णिग्गया। तए णं अलक्खे राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे हट्ठतुट्ठे जहा कोणिए जाव धम्मकहा।

तएणं से अलक्खे राया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए जहा उदायणे तहा णिक्खंते। णवरं जेट्ठपुत्तं रज्जे अभिसिंचइ। एक्कारस अंगाइं। बहू वासा परियाओ जाव विपुले सिद्धे।

एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं छट्ठस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते।

।। छट्ठो वग्गो सम्मत्तो।।

उस काल उस समय में वाराणसी नामक नगरी थी। उसके बाहर उत्तर पूर्व दिशा भाग में काममहावन नाम का उद्यान था। उस वाराणसी नगर में अलक्ष नामक राजा रहते थे।

उस काल उस समय में श्रमण भगवान महावीर पूर्वानुपूर्वी विचरते हुए ग्रामानुग्राम चलते हुए वाराणसी नगर के बाहर काममहावन उद्यान में पधारे। जनसमुदाय भगवान की ओर जाने हेतु निकला। तब अलक्ष राजा को भगवान महावीर के पदार्पण की बात ज्ञात होने पर वे हर्षित एवं परितुष्ट हुए तथा जैसे कोणिक राजा चतुरंगिणी सेना के साथ भगवान के दर्शन के लिए गया था, वैसे ही वे भी भगवान के चरणों में पहुंचे। भगवान महावीर ने धर्मकथा फरमाई।

भगवान महावीर की देशना श्रवण करने के पश्चात् जिस प्रकार उदायन राजा प्रव्रजित हुए थे, वैसे ही अलक्ष राजा भी प्रव्रजित हो गए। अंतर इतना ही था कि अलक्ष राजा ने दीक्षा के पूर्व अपने ज्येष्ठ पुत्र का राज्याभिषेक किया। दीक्षित होने पर अलक्ष अनगार ने ग्यारह अंगों का अध्ययन किया, अनेक वर्षों तक संयम जीवन का

पालन किया तथा विपुल पर्वत का आरोहण करके संथारा ग्रहण करके सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुए।

जम्बू! इस प्रकार श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अन्तगडदशा के छठे वर्ग का यह अर्थ फरमाया था।

।। छठा वर्ग सम्पूर्ण।।

सातवां वर्ग

1-13 अध्ययन

महारानियां भी संयम के पथ पर

96. जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं छट्ठस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, सत्तमस्स वग्गस्स के अट्ठे पण्णत्ते?

एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं सत्तमस्स वग्गस्स तेरस अज्झयणा पण्णत्ता, तं जहा-

संगहणी गाहा

1. नंदा तह. 2. नंदवई 3. नंदुत्तर, 4. नंदसेणिया चेव 5. मरुया 6. सुमरुया 7. महामरुया, 8. मरुद्देवा य अट्ठमा।।1।।

9. भद्दा य 10. सुभद्दा य 11. सुजाया 12. सुमणाइया। 13. भूयदिण्णा य बोधव्वा, सेणिय भज्जाण णामाइं।।12।।

जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं सत्तमस्स वगस्स तेरस अज्झयणा पण्णत्ता पढमस्स णं भंते! अज्झयणस्स अंतगडदसाणं के अट्ठे पण्णत्ते?

एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णयरे। गुणसिलए चेइए। सेणिए राया, वण्णओ। तस्स णं सेणियस्स रण्णो णंदा णामं देवी होत्था - वण्णओ। सामी समोसढे, परिसा णिग्गया। तए णं सा णंदा देवी इमीसे कहाए लद्धट्ठा हट्ठतुट्ठा कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता जाणं दुरुहइ। जहा पउमावई जाव एकारस अंगाइं अहिज्जित्ता वीसं वासाइं परियाओ जाव सिद्धा।

एवं तेरस वि देवीओ णंदा - गमेण णेयव्वाओ णिक्खेवओ।

।। सत्तमो वग्गो सम्मत्तो।।

भंते! यदि श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के छठे वर्ग का यह अर्थ प्रतिपादित किया था तो सातवें वर्ग भगवान ने क्या अर्थ फरमाया था?

जम्बू! श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के सातवें वर्ग के इस प्रकार से तेरह अध्ययन फरमाये-

1. नंदा 2. नन्दवती 3. नन्दोत्तरा 4. नन्दश्रेणिका 5. मरुता 6. सुमरुता 7. महामरुता 8. मरुद्देवा 9. भद्रा 10. सुभद्रा 11. सुजाता 12. सुमनायिता 13. भूतदत्ता-ये सभी श्रेणिक राजा की रानियों के नाम हैं।

भंते! यदि श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अन्तगडदशा के सातवें वर्ग के तेरह अध्ययन फरमाए थे तो भंते! अन्तगडदशा के सातवें वर्ग के प्रथम अध्ययन का भगवान ने क्या अर्थ फरमाया था।

जम्बू! उस काल उस समय में राजगृह नामक नगर था। उसके बाहर गुणशील नामक उद्यान था। राजगृह नगर में श्रेणिक राजा राज्य करते थे। वे हिमवान पर्वत के समान महान थे, अनेक राजा के योग्य गुणों से सम्पन्न थे। उस श्रेणिक राजा के नन्दा नामक महारानी थी। वह सुकुमाल हाथ पैरों वाली यावत् अनेक लक्षणों से सम्पन्न थी। भगवान महावीर का ग्रामानुग्राम विचरते हुए राजगृह नगर के बाहर गुणशील उद्यान में पदार्पण हुआ। जनसमुदाय भगवान की चरणवंदना हेतु निकला। नन्दा महारानी भगवान के पदार्पण के समाचार जानकर हर्षित एवं संतुष्ट होकर अनुचरों को बुलाती है, बुलाकर धार्मिक रथ

तैयार करने का निर्देश दिया। धार्मिक रथ पर आरूढ़ होकर भगवान के दर्शनों के लिए गई। भगवान महावीर ने धर्मदेशना दी जिसे सुनकर वह प्रव्रज्या ग्रहण करने हेतु उत्कण्ठित हो गई। श्रेणिक राजा से प्रव्रज्या की अनुमति प्राप्त करती है। पद्मावती महारानी ने जैसे भगवान अरिष्टनेमी के चरणों में प्रव्रज्या ग्रहण की थी, वैसे ही नन्दा महारानी ने भगवान महावीर के समीप प्रव्रज्या स्वीकार की। नन्दा आर्या ने ग्यारह अंगों का अध्ययन किया, बीस वर्षों तक संयम पर्याय का पालन करती है तथा अंत में संथारा ग्रहण करके सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुई।

नन्दा के समान ही नन्दवती आदि बारह महारानियों ने भी संयम स्वीकार किया। ग्यारह अंगों का अध्ययन करके बीस वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन करके अंत में संथारा पूर्वक सिद्ध, बुद्ध, एवं मुक्त हुई।

जम्बु! इस प्रकार श्रमण भगवान महावीर ने सातवें वर्ग के तेरह अध्ययनों का यह अर्थ फरमाया था।

सातवां वर्ग सम्पूर्ण।

अट्ठमो वग्गो - आठवां वर्ग

पहला अध्ययन - काली

97. जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं सत्तमस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, अट्ठमस्स वग्गस्स के अट्ठे पण्णत्ते?

एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं अट्ठमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता।

तं जहा -

संगहणी गाहा

1. काली, 2. सुकाली, 3. महाकाली, 4. कण्हा, 5. सुकण्हा, 6. महाकण्हा, 7. वीरकण्हा य बोधव्वा, 8. रामकण्हा तहेव य। 9. पिउसेणकण्हा नवमी दसमी, 10. महासेणकण्हा य।।1।।

जइ णं भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं अट्ठमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते! अज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते?

एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा णामं णयरी होत्था। पुण्णभद्दे चेइए। तत्थ णं चंपाए णयरीए कोणिए राया वण्णओ। तत्थ णं चंपाए णयरीए सेणियस्स रण्णो भज्जा कोणियस्स रण्णो चुल्लमाउया काली णामं देवी होत्था वण्णओ। जहा णंदा जाव सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ। बहूहिं चउत्थ छट्ठमेहिं जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

'भंते! यदि श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अन्तगडदशा

के सातवें वर्ग का यह अर्थ फरमाया था तो आठवें वर्ग का भगवान महावीर ने क्या अर्थ फरमाया था?

जम्बू! श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के आठवें वर्ग के दस अध्ययन फरमाए थे। वे इस प्रकार हैं-

1. काली 2. सुकाली 3. महाकाली 4. कृष्णा 5. सुकृष्णा 6. महाकृष्णा 7. वीरकृष्णा 8. रामसेनकृष्णा 9. पितृसेनकृष्णा एवं 10. महासेनकृष्णा।।

'भंते! यदि श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के आठवें वर्ग के दस अध्ययन फरमाए थे तो भंते! अंतगडदशा के आठवें वर्ग के प्रथम अध्ययन का भगवान ने क्या अर्थ फरमाया था?'

जम्बू! उस काल उस समय में चम्पा नामक नगरी थी। उसके बाहर उत्तर पूर्व दिशा भाग में पूर्णभद्र नामक उद्यान था। उस चम्पा नगरी में कोणिक राजा राज्य करता था। उस चम्पा नगरी में श्रेणिक राजा की भार्या (महारानी) कोणिक राजा की छोटी माता काली नामक महारानी थी। उसने भी श्रमण भगवान महावीर की देशना श्रवण कर नंदा महारानी के समान ही श्रेणिक महाराज से अनुमति प्राप्त कर प्रव्रज्या स्वीकार की। सामायिक से प्रारंभ करके ग्यारह अंगों का अध्ययन करती है। अनेक उपवास, बेला, तेला आदि तपस्याओं से आत्मा को भावित करते हुए विचरती है।

सुकुमाल देह से कठोर रत्नावली तपश्चर्या

98. तए णं सा काली अज्जा अण्णया कयाइं जेणेव अज्जचंदणा अज्जा तेणेव उवागया, उवागच्छित्ता एवं वयासी-

'इच्छामि णं अज्जाओ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी रयणावलिं तवं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए।'

अहासुहं देवाणुप्पिए! मा पडिबंधं करेह।



तए णं सा काली अज्जा अज्जचंदणाए अब्भणुण्णाया समाणी रयणावलिं तवं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ, तं जहा-

चउत्थं करेइ करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्बकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्व्कामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठ छट्ठाइं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं केरइ करित्ता सव्वकामगुणियं

पारेइ, पारित्ता, छट्ठं करेइ करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दुवासलमं करेइ करित्ता, सव्वाकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोद्दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, सोलसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठारसमं करेइ, करिता, सव्वकामगुणियं पारेइ, परित्ता, वीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकागुणियं पारेइ, पारित्ता, बावीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चउवीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छव्वीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठावीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, तीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, बत्तीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोत्तीसइमं करेइ, करित्ता, सव्व्कामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोत्तीसं छट्ठाइं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोत्तीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, बत्तीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, तीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठावीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छव्वीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चउवीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, बावीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, वीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठारसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, सोलसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोद्दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, बारसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दसमं करेइ, करित्ता,

सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छट्ठं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चउत्थं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठ छट्ठाइं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छट्ठं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चउत्थं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता।

एवं खलु एसा रयणावलीए तवोकम्मस्स पढमा परिवाडी एगेणं संवच्छरेणं तिहिं मासेहिं बावीसाए य अहोरत्तेहिं अहासुत्तं जाव आराहिया भवइ।

तदनन्तर अन्य किसी समय में वह काली आर्या जहाँ आर्या चन्दना थी वहाँ आई, आकर इस प्रकार कहा-

'आर्या श्रेष्ठ! आपकी अनुज्ञा होने पर मैं रत्नावली तप को स्वीकार करके विचरना चाहती हूं।

'देवानुप्रिये! जिससे तुम्हें सुख हो। प्रतिबंध मत करना।

तब वह काली आर्या, आर्या चन्दना की अनुज्ञा प्राप्त होने पर रत्नावली तप को स्वीकार करके विचरती है। वह इस प्रकार यथा- उपवास करती है, करके सभी अभीष्ट रसों से युक्त पारणा करती है। करके बेला करती है। करके सभी प्रकार के रसों से युक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके आठ बेले करती है, हर बेले के बाद सर्वरसयुक्त पारणा करती है, आठवें बेले का पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरस सहित पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके

सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चोला (चार का तप) करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंचोला (पांच का तप) करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके छः की तपस्या करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके आठ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके नौ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणाा करके दस का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके ग्यारह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बारह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेरह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चौदह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पन्द्रह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सोलह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चौतीस (34) बेले करती है। प्रत्येक बेले के पारणे में सर्वरसयुक्त आहार ग्रहण करती है। इस प्रकार चौंतीस बेलों का पारणा करके सोलह का तप करती है। करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पन्द्रह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चौदह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेरह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बारह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके ग्यारह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके दस का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके नौ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त

पारणा करती है, पारणा करके आठ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके छः का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त का पारणा करती है, पारणा करके पांच का तप करती हे, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चार का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके आठ बेले करती है। प्रत्येक बेले के पारणे में सर्वरसयुक्त आहार ग्रहण करती है। आठवें बेले का पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है।

इस प्रकार रत्नावली तप कर्म की यह प्रथम परिपाटी एक वर्ष तीन महीने एवं बाईस अहोरात्र में सूत्रानुसार, मार्गानुसार, मर्यादानुसार आराधित होती है।

99. **तयाणंतरं च णं दोच्चाए परिवाडीए चउत्थं करेइ, करित्ता विगइवज्जं पारेइ पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता विगइवज्जं पारेइ पारित्ता एवं जहा पढमाए परिवाडीए तहा बीयाए वि णवरं - सव्वत्थ पारणए विगइवज्जं पारेइ जाव आराहिया भवइ।**

तयाणंतरं च णं तच्चाए परिवाडीए चउत्थं करेइ, करित्ता अलेवाडं पारेइ। सेसं तहेव। णवरं अलेवाडं पारेइ।

एवं चउत्था परिवाडी। णवरं सव्वत्थपारणए आयंबिलं पारेइ। सेसं तं चेव।

संगहणी गाहा

पढमंमि सव्वकामं पारणयं बिइयए विगइवज्जं।
तइयंमि अलेवाडं आयंबिलओ चउत्थम्मि।।1।।

तए णं सा काली अज्जा रयणावलीतवोकम्मं पंचहिं संवच्छरेहिं दोहि य मासेहिं अट्ठवीसाए य दिवसेहिं अहासुत्तं जाव आराहित्ता जेणेव अज्जचंदणा अज्जा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अज्जचंदणं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता बहूहिं चउत्थ-छट्ठट्ठम-दसमदुवालसेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणी विहरइ।

तदनन्तर दूसरी परिपाटी में उपवास करती है, करके विकृतियों (दूध, दही, घी, तेल मीठा) से रहित पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके विकृतिरहित पारणा करती है। आदि रीति से जैसा पहली परिपाटी में किया है, उसी प्रकार दूसरी परिपाटी में भी किया। अन्तर इतना है कि पारणे में सर्वत्र विकृतियों से रहित पारणा करती है यावत् दूसरी परिपाटी भी एक वर्ष, तीन मास एवं बाईस अहोरात्र में सूत्रानुसार आराधित होती है।

तदनन्तर तीसरी परिपाटी में उपवास करती है, करके घी, तेल आदि के लेप से रहित पारणा करती है, आदि सम्पूर्ण तप प्रथम परिपाटी के समान किया, अन्तर यह है कि पारणे में लेपरहित आहार ग्रहण करती है।

चौथी परिपाटी भी इसी के अनुसार जान लेना चाहिए इसमें पारणे में सर्वत्र आयम्बिल करती है, ऐसा कहना चाहिए। शेष सारा वर्णन पूर्ववत् ही समझना चाहिए।

पहली परिपाटी में सभी रसों से युक्त भोजन पारणे में लिया जाता है। दूसरी परिपाटी में विकृतियों (विगयों) से रहित आहार पारणे में ग्रहण किया जाता है। तीसरी परिपाटी में पारणे में लेपरहित आहार लिया जाता है। चौथी परिपाटी में पारणे में आयम्बिल किया जाता है।

तब वह काली आर्या पांच साल, दो महीने और अठाईस दिनों में सूत्र, कल्प एवं मार्ग के अनुसार रत्नावली तप कर्म की आराधना करके जहाँ आर्या चन्दना थी, वहाँ आई, आकर आर्या चन्दना को वन्दन नमस्कार करती है, वन्दन नमस्कार करके अनेक उपवास, बेले, तेले, चार, पांच आदि तपस्याओं से आत्मा को भावित करते हुए विचरण करती है।

दैहिक दुर्बलता में आत्मिक उज्ज्वलता

100. तए णं सा काली अज्जा तेणं उरालेणं जाव धमणिसंतया जाया यावि होत्था। से जहा इंगालसगडी वा जाव सहुयहुयासणे इव भासरासि पलिच्छण्णा तवेणं, तएणं तवतेयसिरीए अईव अईव उवसोहेमाणी चिट्ठइ।

तए णं तीसे कालीए अज्जाए अण्णया कयाइं पुव्वरत्तावरत्तकाले अयमज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था, जहा खंदयस्स चिंता जाव अत्थि उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कार-परक्कमे सद्धा छिई संवेगे ताव मे सेयं कल्लं जाव जलंते अज्जचंदणं अज्जं आपुच्छित्ता अज्जचंदणाए अज्जाए अब्भणुण्णाए समाणीए संलेहणा-झूसणा-झूसियाए भत्तपाण-पडियाइक्खाए कालं अणवकंखमाणीए विहरित्तए त्ति कट्टु एवं संपेहेइ, संपेहित्ता कल्लं जेणेव अज्जचंदणा अज्जा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अज्जचंदणं अज्जं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-इच्छामि णं अज्जाओ! तुब्भेहिं

अब्भणुण्णाया समाणी संलेहणा जाव विहरित्तए। अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह।

तए णं सा काली अज्जा अज्जचंदणाए अज्जाए अब्भणुण्णाया समाणी संलेहणा-झूसणा-झूसिया जाव विहरइ। तए णं सा काली अज्जा अज्जचंदणाए अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जित्ता बहुपडिपुण्णाइं अट्ठ संवच्छराइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ, णग्गभावे जाव चरिमुस्सासेहिं सिद्धा। निक्खेवओ।

तदनन्तर वह काली आर्या उस प्रधान, प्रयत्नपूर्वक किए गए, कल्याणकारी, धन्य, मंगलमय, शोभायुक्त उदग्र एवं उत्तम तपश्चरण से सूख गई, मांस रहित हो गई, हड्डियों एवं चमड़ी मात्र से युक्त हो गई। उनके शरीर से कड़-कड़ की आवाज आने लगी, वे कृश हो गई जिससे उनके शरीर की नसें साफ दिखने लगी। वे आत्मबल से ही चलती थी, आत्मबल से ही खड़ी होती थी, बोलते हुए भी थक जाती, अब बोलना है, इन विचारों से भी थक जाती थी। जैसे कोई लकड़ियों से भरी गाड़ी, पत्तों से भरी गाड़ी, कोयलों से भरी गाड़ी, धूप में रखने पर सूख जाने के बाद चलती हुई आवाज करती रहती है, उसी प्रकार काली आर्या के भी चलते हुए आवाज होती थी, खड़े रहते हुए आवाज होती थी। वे तप तेज से भरी हुई एवं मास व रक्त से हीन होकर उसी प्रकार तपस्तेज से अत्यंत उपशोभित हो रही थी, जैसे राख से ढकी हुई अग्नि अपने आप में देदीप्यमान होती है।

फिर अन्य किसी समय पूर्व रात्रि एवं अपर रात्रि के समय उन काली आर्या के इस प्रकार के अध्यवसाय, चिन्तन, प्रार्थित, मनोगत एवं संकल्प उत्पन्न हुआ कि इस प्रकार से तप संयम की आराधना

करने से यह शरीर कृशता को प्राप्त हो गया है तथापि मेरे भीतर उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषाकार पराक्रम रहा हुआ है। अतः मेरे लिए श्रेयस्कर है कि जब तक मेरे भीतर उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषाकार पराक्रम, श्रद्धा, धैर्य व संवेग मौजूद है, तब तक मैं कल प्रातः सूर्योदय होते ही आर्या चन्दना को पूछकर, आर्या चन्दना की अनुमति प्राप्त हो जाने पर संलेखना करके आहार पानी का प्रत्याख्यान करके मृत्यु की आकांक्षा से रहित होकर विचरण करूँ। इस प्रकार से वे काली आर्या विचार करती है, विचार करके अगले दिन प्रातः जहाँ आर्या चन्दना थी, वहाँ आती है, आकर आर्या चन्दना को वन्दन नमस्कार करती हैं, वन्दन नमस्कार करके इस प्रकार कहने लगी - 'आर्या श्रेष्ठ! आपकी अनुमति होने पर मैं संलेखना संथारा ग्रहण करना चाहती हूं।

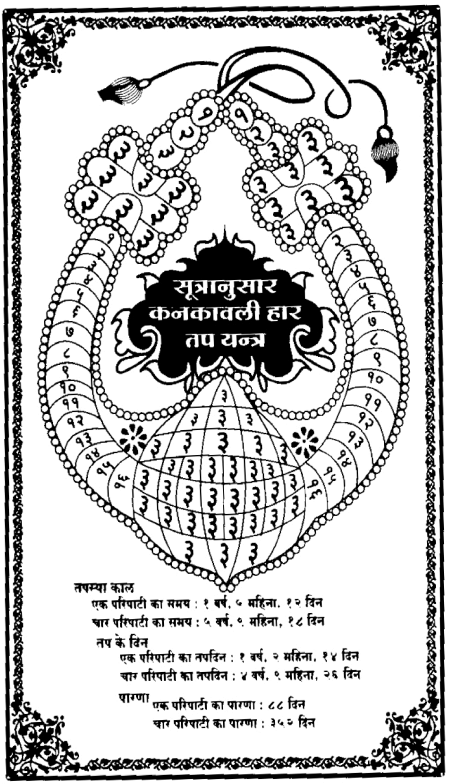
आर्या चन्दना- 'देवानुप्रिये! जिससे तुम्हें सुख हो। प्रतिबंध मत करो। तब वह काली आर्या, आर्या चन्दना द्वारा अनुज्ञात होने पर संलेखना संथारा ग्रहण करके विचरती है, उस काली आर्या ने आर्या चन्दना के पास सामयिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन करके लगभग आठ वर्षों तक श्रामण्य पर्याय का पालन करके एक मास की संलेखना से अपनी आत्मा को युक्त करके साठ भक्तों का अनशन रूप से छेदन करती है अर्थात् साठ भक्तों का त्याग करके जिस उद्देश्य से नग्नभाव मुंडभाव आदि को स्वीकार किया जाता है, उस उद्देश्य को अंतिम उच्छ्वास में सिद्ध कर लिया।

जम्बू! इस प्रकार मोक्ष को प्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अन्तगडदशा के आठवें वर्ग के प्रथम अध्ययन का यह अर्थ फरमाया था।

द्वितीय अध्ययन-सुकाली

सुकाली का कनकावली तप का हार

101. तेणं कालेणं तेण समएणं चंपा णामं णयरी। पुण्णभद्दे चेइए। कोणिए राया। तत्थ णं सेणियस्स रण्णो भज्जा कोणियस्स रण्णो



चुल्लमाउया सुकाली णामं देवी होत्था। जहा काली तहा सुकाली वि णिक्खंता जाव बहूहिं चउत्थं जाव तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणी विहरइ।

एस णं सा सुकाली अज्जा अण्णया कयाइं जेणेव अज्जचंदणा अज्जा जाव इच्छामि णं अज्जाओ। तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी कणगावली तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए। एवं जहा रयणावली तहा कणगावली वि,णवरं-तिसु-ठाणेसु अट्ठमाइं करेइ, जहा रयणावलीए

छट्ठाइं। एक्काए परिवाडीए संवच्छरो, पंच मासा बारस य अहोरत्ता। चउण्हं पंच वरिसा णव मासा अट्ठारस दिवसा। सेसं तहेव। णव वासा परियाओ जाव सिद्धा।

उस काल उस समय में चंपा नामक नगरी थी। उसके बाहर उत्तर पूर्व दिशा भाग में पूर्णभद्र नाम का उद्यान था। कोणिक राजा राज्य करता था। वहाँ श्रेणिक राजा की महारानी एवं कोणिक राजा की छोटी माता सुकाली नामक महारानी निवास करती थी। काली महारानी के समान ही सुकाली महारानी ने भी प्रभु चरणों में प्रव्रज्या ग्रहण की यावत् अनेक उपवास, बेले आदि तपस्याओं से आत्मा को भावित करते हुए विचरण करती है।

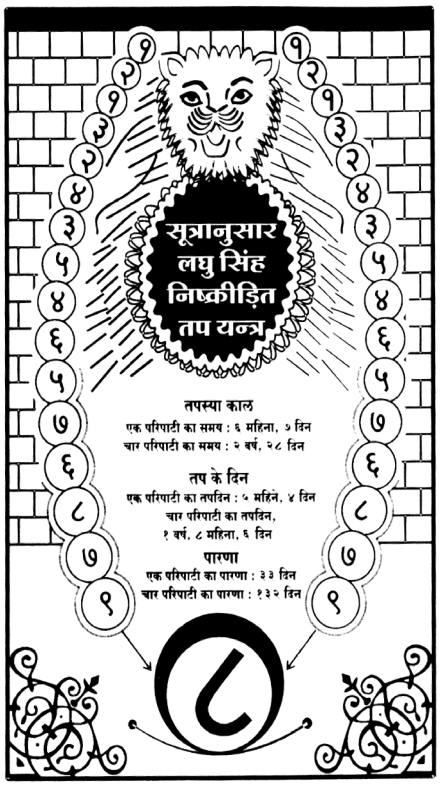
यह सुकाली आर्या अन्य किसी समय जहाँ आर्या चन्दना थी वहाँ पहुँचती है, पहुँचकर वन्दन नमस्कार पूर्वक निवेदन करती है- 'आर्या-श्रेष्ठ! आपकी अनुज्ञा प्राप्त होने पर मैं कनकावली तप कर्म को स्वीकार करके विचरण करना चाहती हूँ।' इसी प्रकार जैसा रत्नावली तपस्या का वर्णन है, वैसा ही कनकावली का भी है। अन्तर यह है कि तीन स्थानों पर जहाँ रत्नावली में बेले हैं, वहाँ कनकावली में तेले करती है। एक परिपाटी में एक साल पांच महीने एवं बारह अहोरात्र होते हैं। चार परिपाटियों में पांच वर्ष, नौ मास एवं अठारह दिन लगते हैं। शेष वर्णन पूर्ववत् समझ लेना चाहिए। नौ वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन करके एक मास का संलेखना संथारा ग्रहण करके सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होती है। यावत् सभी दु:खों का अन्त करती है।

तृतीय अध्ययन-महाकाली

महाकाली द्वारा लघुसिंह निष्क्रीड़ित तप

102. एवं महाकाली वि। णवरं-खुड्डागसीहणिक्कीलियं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ तं जहा-

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छट्ठं करेइ, करित्ता, सव्वकाम - गुणियं पारेइ, पारित्ता, चउत्थं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छट्ठं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकाम -गुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दुवालसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकाम



- गुणियं पारेइ, पारित्ता, चोद्दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दुवालसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, सोलसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोद्दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोद्दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठारसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, सोलसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, बीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठारसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, बीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, सोलसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठारसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोद्दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, सोलसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, बारसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोद्दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, बारसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छट्ठं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चउत्थं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छट्ठं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चउत्थं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता।

तहेव चत्तारि परिवाडिओ। एक्काए परिवाडीए छम्मासा सत्त य दिवसा। चउण्हं दो वरिसा अट्ठावीसा य दिवसा जाव सिद्धा।

सुकाली महारानी के समान ही महाकाली महारानी ने भी श्रमण भगवान के समीप प्रव्रज्या अंगीकार की। अन्तर यह है कि महाकाली आर्या क्षुल्लकसिंह निष्क्रीडित नामक तप-कर्म को स्वीकार करके विचरती है, उसका स्वरूप इस प्रकार है-

पहले उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चार की तपस्या करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंचोला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चार का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके छः का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंचोला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके छह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके आठ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके नौ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके आठ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके नौ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त

पारणा करती है, पारणा करके आठ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके छह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंचोला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके छह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चार का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंचोला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चार का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है।

यह पहली परिपाटी है जिसमें पारणे में सर्वरस ग्रहण किए जाते हैं। इसी प्रकार दूसरी, तीसरी एवं चौथी परिपाटी होती है, जिनमें क्रमशः विगय रहित, लेपरहित तथा आयम्बिल के रूप में पारणे होते हैं। एक परिपाटी में छह महीने और सात दिवस लगते हैं। चारों परिपाटियों में दो वर्ष एवं अट्ठाइस दिन लगते हैं। तदन्तर महाकाली आर्या ने अनेक तपस्याएं की यावत् अन्त में संथारा ग्रहण करके सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुई।

चतुर्थ अध्ययन-कृष्णा

महासिंहनिष्क्रीडित तप

103. **एवं कण्हा वि। णवरं-महा सीहणिक्कीलियं तवोकम्मं जहेव खुड्डागं णवरं-चोत्तीसइमं जाव णेयव्वं। तहेव ओसारेयव्वं, एक्काए परिवाडिए एगं वरिसं छम्मासा अट्ठारस य दिवसा। चउण्हं छव्वरिसा दो मासा बारस य अहोरत्ता। सेसं जहा कालीए जाव सिद्धा।**



महाकाली के समान ही कृष्णा महारानी का भी वर्णन है जिसने श्रमण भगवान महावीर के चरणों में प्रव्रज्या स्वीकार की। विशेष यह है कि कृष्णा आर्या ने महासिंहनिष्क्रीडित तप कर्म की आराधना की। यह तप की क्षुल्लकसिंह निष्क्रीडित तप के समान है। अन्तर यह है कि क्षुल्लकसिंह निष्क्रीडित तप में उपवास से लेकर नौ तक ऊपर तपस्या बढ़ाई गई और इस महासिंहनिष्क्रीडित तप में ऊपर सोलह तक तपस्या बढ़ाई जाती है। पूर्वोक्त तरीके से ही तपस्या में नीचे उतरने का क्रम भी समझ लेना चाहिए। एक परिपाटी में एक वर्ष, छह महीने एवं अठारह दिन लगते हैं। चार परिपाटियों में छह वर्ष, दो महीने एवं बारह अहोरात्र लगते हैं। शेष वर्णन काली आर्या के समान है। यावत् कृष्णा आर्या भी अन्त समय में संथारा करके सिद्ध हो जाती है।

पंचम अध्ययन-सुकृष्णा

सप्तसप्तमिका नामक भिक्षु प्रतिमा

104. एवं सुकण्हा वि, णवरं सत्तसत्तमियं भिक्खुपडिमं उपसंपज्जित्ता णं विहरइ।

पढमे सत्तए एक्केक्कं भोयणस्स दत्तिं पडिगाहेइ, एक्केक्कं पाणगस्स।

दोच्चे सत्तए दो-दो भोयणस्स दो-दो पाणगस्स पडिगाहेइ। तच्चे सत्तए तिण्णि-तिण्णि दत्तीओ भोयणस्स, तिण्णि-तिण्णि दत्तीओ पाणगस्स।

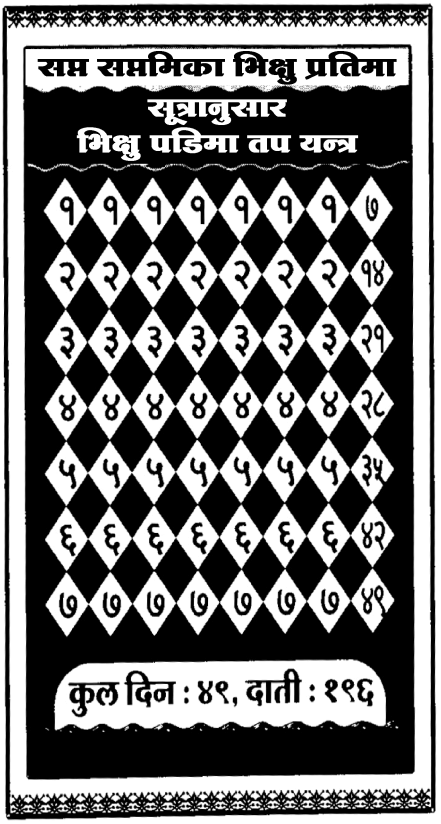
चउत्थे सत्तए चत्तारि-चत्तारि दत्तीओ भोयणस्स, चत्तारि चत्तारि दत्तीओ पाणगस्स।

पंचमे सत्तए पंच पंच दत्तीओ भोयणस्स पंच-पंच दत्तिओ पाणगस्स।

छट्ठे सत्तए छ- छ दत्तीओ भोयणस्स छ-छ दत्तीओ पाणगस्स।

सत्तमे सत्तए सत्त सत्त दत्तीओ भोयणस्स, सत्त-सत्त दत्तीओ पाणगस्स पडिगाहेइ।

एवं खलु एयं सत्तसत्तमियं भिक्खुपडिमं एगुण पण्णाए राइंदिएहिं एगेण य छण्णउएणं भिक्खासएणं अहासुत्तं जाव आराहित्ता जेणेव अज्ज चंदणा अज्जा तेणेव उवागया, उवागच्छित्ता अज्जचंदणं अज्जं वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-इच्छामि णं अज्जाओ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी अट्ठट्ठमियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए।



अहासुहं देवाणुप्पिए। मा पडिबंधं करेह।

कृष्णा के समान ही सुकृष्णा महारानी का वर्णन है। अन्तर इतना है कि प्रव्रजित होने के अनन्तर सुकृष्णा आर्या सप्तसप्तमिका भिक्षु प्रतिमा को स्वीकार करके विचरण करती है।

पहले सप्ताह में रोज एक दत्ति भोजन की व एक दत्ति पानी की ग्रहण करती है। (भोजन की एक दत्ति का तात्पर्य है जितना भोजन एक साथ पात्र में डाला जाए तथा पानी की दत्ति का तात्पर्य है कि धार टूटे बिना एक साथ जितनी पानी पात्र में आ जाए।)

दूसरे सप्ताह में नित्य दो दत्ति भोजन की व दो दत्ति पानी की ग्रहण करती है।

तीसरे सप्ताह में नित्य प्रति तीन दत्ति भोजन की और तीन दत्ति पानी की ग्रहण करती है।

चौथे सप्ताह में रोज चार दत्ति भोजन व चार दत्ति पानी की लेती है।

पांचवें सप्ताह में प्रतिदिन पांच दत्ति भोजन की और पांच दत्ति पानी की ग्रहण करती है।

छठे सप्ताह में रोज छह दत्ति भोजन की व छह दत्ति पानी की स्वीकार करती है।

सातवें सप्ताह में सात दत्ति भोजन की व सात दत्ति पानी की नित्य ग्रहण करती है।

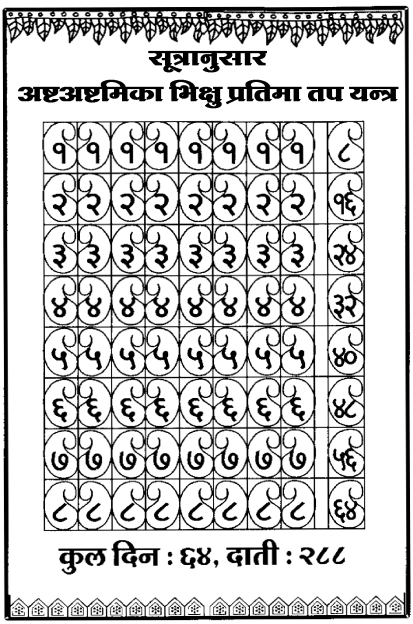
इस प्रकार सुकृष्णा आर्या इस सप्तसप्तमिका भिक्षु प्रतिमा की उनपचास अहोरात्रियों में तथा एक सौ छियानवे भिक्षाओं के द्वारा सूत्रानुसार, कल्पानुसार, मार्गानुसार यावत् आराधना करके जहाँ आर्या चन्दना थी वहाँ पहुंची, पहुंचकर आर्या चन्दना को वन्दन नमस्कार करती है, वन्दन नमस्कार करके इस प्रकार कहने लगी-

आर्याश्रेष्ठ! आपसे अनुज्ञा मिलने पर मैं 'अष्ट-अष्टमिका' भिक्षुप्रतिमा को स्वीकार करके विचरना चाहती हूं।

देवानुप्रिये! जिससे तुम्हें सुख हो, प्रतिबंध मत करो, आर्या चन्दना ने अनुमत्ति प्रदान करते हुए फरमाया।

अष्टअष्टमिका, नवनवमिका एवं दशदशमिका प्रतिमा

105. तए णं सा सुकण्हा अज्जा अज्ज चंदणाए अज्जाए अब्भणुण्णाया समाणी अट्ठट्ठमियं भिक्जुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ- पढमे अट्ठए एक्केक्कं भोयणस्स दत्तिं पडिगाहेइ। एक्केक्कं पाणगस्स जाव अट्ठमे अट्ठए अट्ठट्ठभोयणस्स दत्तिं पडिगाहेइ, अट्ठट्ठ पाणगस्स।



एवं खलु एयं अट्ठट्ठमियं भिक्खु पडिमं चउसट्ठीए राइंदिएहिं दोहिं य अट्ठासीएहिं भिक्खासएहिं अहासुत्तं जाव आराहित्ता नवनवमियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ-

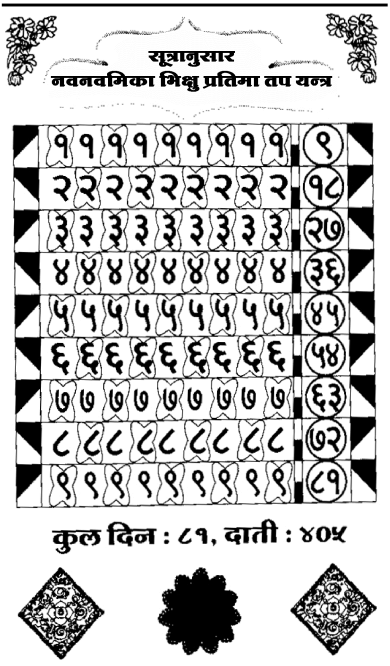
पढमे णवए एक्केक्कं भोयणस्स दत्तिं पडिगाहेइ एक्केक्कं पाणगस्स जाव णवमे णव-णव दत्तिओ भोयणस्स, पडिगाहेइ णवणव पाणगस्स।

एवं खलु एयं णवणवमियं भिक्खुपडिमं एक्कासीइए राइंदिएहिं चउहिं पंचेतरेहिं भिक्खासएहिं अहासुत्तं जाव आराहित्ता दसदसमियं

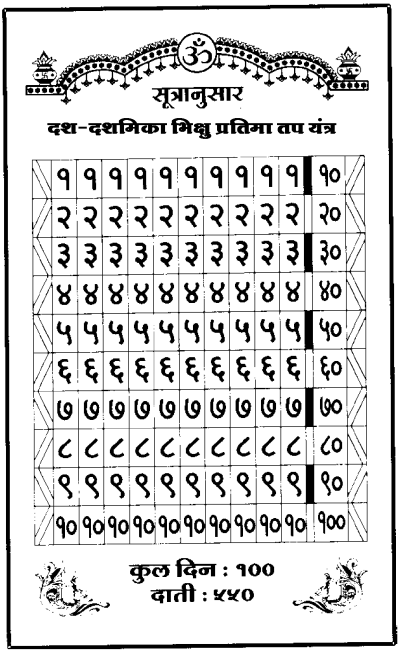
भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ। पढमे दसए एक्केक्कं भोयणस्स दत्तिं पडिगाहेइ, एक्केक्कं पाणगस्स जाव दसमे दसए दस-दस दत्तीओ भोयणस्स पडिगाहेइ, दस-दस पाणगस्स। एवं खलु एयं दसदसमियं भिक्खुपडिमं एक्केणं राइंदियसएणं अद्धछट्ठेहिं य भिक्खासएहिं अहासुत्तं जाव आराहेइ आराहित्ता बहुहिं चउत्थ-छट्ठट्ठम-दसम-दुवालसेहिं मासद्धमास-खमणेहिं विविहेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणी विहरइ।

तए णं सा सुकण्हा अज्जा तेणं ओरालेणं तवो कम्मेणं जाव सिद्धा। निक्खेवओ।

फिर वह सुकृष्णा आर्या आर्या चन्दना के द्वारा अनुज्ञा मिलने पर अष्ट-अष्टमिका भिक्षु प्रतिमा को स्वीकार करके विचरती है-



पहले आठ दिवसों में नित्य एक दत्ति भोजन की व एक दत्ति पानी की ग्रहण करती है। दूसरे आठ दिनों में दो दत्ति भोजन की व दो दत्ति पानी की ग्रहण करती है। इसी प्रकार प्रत्येक अष्टक (आठ अहोरात्र) में एक-एक दत्ति बढ़ाते हुए आठवें अष्टक में रोज आठ दत्ति भोजन की व आठ दत्ति पानी की ग्रहण करती है।



इस प्रकार इस अष्ट-अष्टमिका भिक्षुप्रतिमा की चौसठ अहोरात्रों से तथा दो सौ अठ्यासी (288) भिक्षाओं के सूत्रानुसार कल्पानुसार मार्गानुसार यावत् आराधना करके नवनवमिका भिक्षुप्रतिमा स्वीकार करके विचरण करती है।

पहले नवक् (नौ दिवसों) में नित्य एक दत्ति भोजन की व एक दत्ति पानी की ग्रहण करती है यावत् क्रमशः प्रत्येक नवक् में एक-एक दत्ति बढ़ाते हुए नवें नवक में नौ दत्ति भोजन की व नौ दत्ति पानी की ग्रहण करती है। इस प्रकार नवनवमिका भिक्षुप्रतिमा का इक्यासी अहोरात्रों से एवं चार सौ पांच भिक्षाओं से सूत्रानुसार, कल्पानुसार, मार्गानुसार यावत् आराधना करके दशदशमिका भिक्षुप्रतिमा को स्वीकार करके विचरती है। पहले दशक (दस दिनों) में एक दत्ति भोजन की व एक दत्ति पानी की ग्रहण करती है यावत् प्रत्येक दशक में एक दत्ति बढ़ाते हुए दसवें दशक में दस दत्ति भोजन की व दस दत्ति पानी की ग्रहण करती है। इस प्रकार इस दशदशमिका भिक्षुप्रतिमा का एक सौ अहोरात्रियों से तथा साढे पांच सौ भिक्षाओं के द्वारा सूत्रानुसार यावत् आराधना करती है,

आराधन करके अनेक उपवास, बेले, तेले, चौले, पंचोले, अर्धमासखमण एवं मासखमण आदि विविध तपश्चर्याओं से आत्मा को भावित करती हुई विचरण करती है।

तदनन्तर वह सुकृष्णा आर्या इस प्रधान तप:कर्म से अत्यंत कृश हो जाती है। यावत् संथारा ग्रहण करके सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हो जाती है।

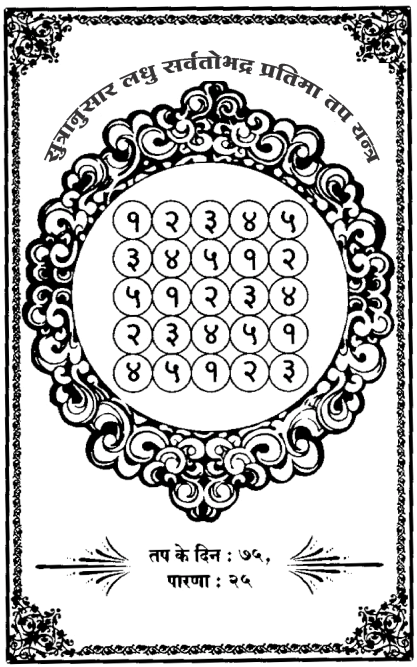
जम्बू! उन श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा के आठवे वर्ग के पांचवे अध्ययन का यह अर्थ फरमाया था।

षष्ठम अध्ययन-महाकृष्णा

लघुसर्वतोभद्र तप

106. एवं महाकण्हा वि णवरं-खुड्डागं सव्वओभद्दं पडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ तंजहा-

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छट्ठं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दुवालसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता,



अट्ठमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दुवालसमं करेइ, करित्ता, सव्वकाम - गुणियं पारेइ, पारित्ता, चउत्थं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छट्ठं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दुवालसमं करेइ, करित्ता, सव्वकाम -गुणियं पारेइ, पारित्ता, चउत्थं करेइ, करित्ता,

सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छट्ठं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छट्ठं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दुवालसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चउत्थं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दुवालसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छट्ठं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ।

एवं खलु एयं खुड्डागसव्वओभद्दस्स तवोकम्मस्स पढमं परिवाडिं तिहिं मासेहिं दसहिं दिवसेहिं अहासुत्तं जाव आराहित्ता दोच्चाए परिवाडीए चउत्थं करेइ करित्ता विगइवज्जं पारेइ, पारित्ता जहा रयणावलीए तहा एत्थ जाव आराहित्ता दोच्चाए परिवाडीए वि चत्तारि परिवाडीओ। पारणा तहेव चउण्हं कालो संवच्छरो मासो दस य दिवसा। सेसं निक्खेवओ तहेव जाव सिद्धा।

सुकृष्णा के समान ही महाकृष्णा का वर्णन है। विशेषता यह है कि महाकृष्णा आर्या क्षुल्लक सर्वतोभद्र प्रतिमा को स्वीकार करके विचरण करती है, उसका स्वरूप इस प्रकार है-

सबसे पहले उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है। पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चौला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा रकती है,

पारणा करके पंचोला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चौला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंचोला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंचोला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चौला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चौला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंचौला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चौला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंचोला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है।

इस रीति से क्षुल्लक सर्वतोभद्र तपःकर्म की पहली परिपाटी की तीन महीने और दस दिनों में सूत्रानुसार यावत् आराधना करके दूसरी परिपाटी में उपवास करती है, करके विगयरहित पारणा करती

है। पारणा करके यावत् प्रथम परिपाटी के अनुसार दूसरी परिपाटी में भी तप करती है, फर्क यह है कि पारणे में विगयरहित आहार ाकरती है। तीसरी परिपाटी में पारणे में लेपरहित आहार करती है, चौथी परिपाटी में पारणे में आयंबिल करती है। चारों परिपाटियों में कुल एक साल एक महीना और दस दिन लगते हैं। महाकृष्णा आर्या ने क्षुल्लक सर्वतोभद्र तप की आराधना के पश्चात् अन्य कभी कई उपवास, बेला आदि तपस्याएं की तथा अन्त में संथारा धारण करके सिद्ध हुई।

जम्बू! इस प्रकार श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंतगडदशा के आठवें वर्ग छठे अध्ययन का यह अर्थ फरमाया था।

सप्तम अध्ययन-वीरकृष्णा

महासर्वतोभद्र तप

107. एवं वीरकण्हा वि णवरं-महालयं सव्वओभद्दं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ। तं जहा-

पढमा लया-चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता।

बीया लया- दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता।

तइया लया- सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ पारित्ता, चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ पारित्ता, छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोद्दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता।

चउत्थी लया- अट्ठमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दुवालसमं

करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोद्दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, सोलसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चउत्थं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छट्ठं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता।

पंचमी लया- चोद्दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, सोलसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चउत्थं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छट्ठं करेइ, करित्ता, सव्वकाम- गुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दुवालसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता।



छट्ठी लया- छट्ठं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दुवालसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोद्दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, सोलसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चउत्थं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता।

सत्तमी लया- दुवालसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोद्दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, सोलसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चउत्थं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, छट्ठं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता।

एक्काए कालो अट्ठ मासा पंच य दिवसा। चउण्हं दो वासा अट्ठ मासा वीसं दिवसा। सेसं तहेव जाव सिद्धा।

महाकृष्णा के समान वीरकृष्णा का वर्णन भी जान लेना चाहिए। अन्तर यह है कि वह महासर्वतोभद्र तप स्वीकार करके विचरण करती है। वह इस प्रकार है-

प्रथम लता- उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चौला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंचोला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके छः का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके,

दूसरी लता- चौला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंचोला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके छः का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा

करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके,

तीसरी लता- सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चौला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंचोला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके छः का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके,

चौथी लता- तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चौला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंचोला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके छः का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके,

पांचवीं लता- छः की तपस्या करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चौला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंचोला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके,

छठी लता- बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चौला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंचोला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके छः का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके।

सातवीं लता- पंचोला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके छः का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चौला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, यह सातवीं लता सम्पूर्ण होती है।

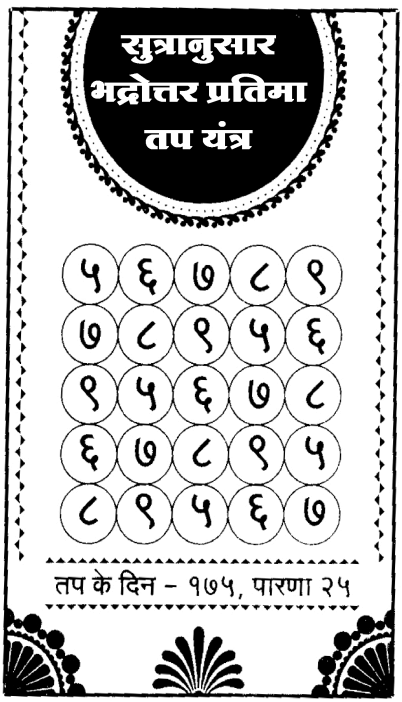
सातों लताओं से युक्त इस प्रथम परिपाटी में आठ महीने और पांच दिन का समय लगता है विगय त्याग, लेपरहित एवं आयंबिल के रूप में पारणे वाली क्रमशः दूसरी, तीसरी एवं चतुर्थ परिपाटी को भी मिला लेने पर चारों परिपाटियों में कुल दो साल, आठ महीने एवं बीस दिन का समय लगता है। अवशेष वर्णन महाकृष्णा आर्या के तुल्य है। यावत् अन्ततः संथारा करके वीरकृष्णा आर्या भी सिद्ध हो जाती है।

अष्टम अध्ययन-रामकृष्णा

भद्रोत्तरप्रतिमा तप

108. एवं रामकण्हा वि, णवरं भद्दोत्तरपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ। तंजहा-

पढमा लया- दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोद्दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, सोलसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठारसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, वीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता।



बीया लया- सोलसमं करेइ, करित्ता, सव्वकाम-गुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठारसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, वीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दुवालसमं करेइ, करित्ता, सव्वकाम-गुणियं पारेइ, पारित्ता, चोद्दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता।

तइया लया- वीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दुवालसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोद्दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, सोलसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठारसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता।

चउत्थी लया- चोद्दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, सोलसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, अट्ठारसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, वीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दुवालसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता।

पंचमी लया- अट्ठारसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, वीसइमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दुवालसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, चोद्दसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, सोलसमं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता।

एक्काए कालो छम्मासा वीस य दिवसा। चउण्हं कालो दो वरिसा दो मासा वीस य दिवसा। सेसं तहेव जहा काली जाव सिद्धा।

वीरकृष्णा देवी के समान ही रामकृष्णा महारानी का वर्णन भी समझ लेना चाहिए। यावत् रामकृष्णा भी प्रभु चरणों में प्रव्रजित होकर भद्रोत्तरप्रतिमा को स्वीकार करके विचरण करती है, वह भद्रोत्तरप्रतिमा इस प्रकार है-

पहली लता- सबसे पहले पंचोला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके छः का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त

पारणा करती है, पारणा करके सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके आठ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके नौ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके,

दूसरी लता- सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके आठ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके नौ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पांच का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके छः का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके,

तीसरी लता- नौ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पांच का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके छः का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके आठ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके,

चौथी लता- छः का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके आठ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके नौ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंचोला तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके,

पांचवीं लता- आठ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त

पारणा करती है, पारणा करके नौ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पांच का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके छः का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है।

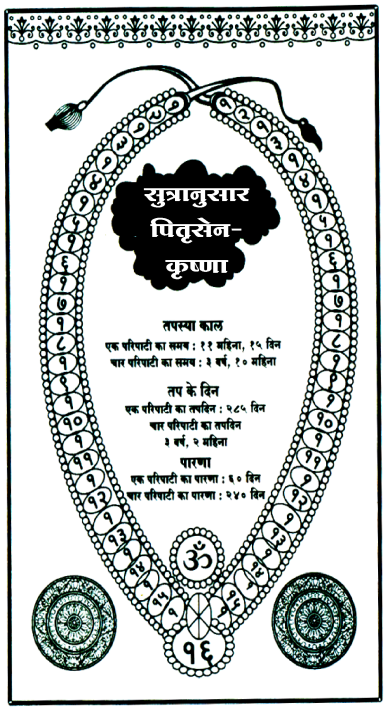
इस प्रकार से इन पांच लताओं वाली पहली परिपाटी में छः महीने और बीस दिन का समय लगता है। चारों परिपाटियों को मिलाकर कुल दो साल, दो महीने और बीस दिन का समय लगता है। शेष वर्णन काली आर्या के समान समझना यावत् रामकृष्ण आर्या भी संथारा करके सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हो गई।

नवम अध्ययन-पितृसेनकृष्णा

मुक्तावली तप

109. एवं पिउसेणकण्हा, वि, नवरं-मुत्तावलि तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ, तं जहा-

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता। छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता, दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता, सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम-गुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकाम-गुणियं पारेइ, पारित्ता चोद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम गुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकाम-गुणियं पारेइ, पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकाम-



गुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता बावीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउवीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता छव्वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता अट्ठावीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता बत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चोत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता बत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ।

एवं तहेव ओसारेइ जाव चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ।

एक्काए कालो एक्कारस मासा पण्णरस य दिवसा। चउण्हं तिण्णि वरिसा दस य मासा सेसं जाव सिद्धा।

पितृसेनकृष्णा महारानी का वर्णन भी पूर्ववत् जान लेना चाहिए। उसने भी श्रमण भगवान महावीर के चरणों में प्रव्रज्या अंगीकार की

तथा व मुक्तावली नामक तप को स्वीकार करके विचरण करती है। वह मुक्तावली तप इस प्रकार है- सर्वप्रथम उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चौला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंचोला करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके छः का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सात का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके आठ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके नौ का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके दस का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके ग्यारह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके बारह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है,

करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके तेरह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चौदह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंद्रह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके सोलह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके पंद्रह का तप करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है, पारणा करके चौदह का तप करती है, इसी प्रकार आगे भी उसी प्रकार से उतरती है, जिस क्रम में चढ़ी थी यावत् उपवास करती है, करके सर्वरसयुक्त पारणा करती है।

एक परिपाटी का समय ग्यारह महीने और पंद्रह दिन है। चारों परिपाटियों का समय तीन साल और दस महीने का है। शेष वर्णन पूर्व के समान जानना चाहिए यावत् पितृसेनकृष्णा आर्या भी संथारापूर्वक सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हो जाती है।

दशम अध्ययन-महासेनकृष्णा

आयम्बिल वर्धमान तप

1	1	2	1	3	1	4	1	5	1	6	1	7	1	8	1	9	1	10	1
11	1	12	1	13	1	14	1	15	1	16	1	17	1	18	1	19	1	20	1
21	1	22	1	23	1	24	1	25	1	26	1	27	1	18	1	19	1	30	1
31	1	32	1	33	1	34	1	35	1	36	1	37	1	38	1	39	1	40	1
41	1	42	1	43	1	44	1	45	1	46	1	47	1	48	1	49	1	50	1
51	1	42	1	43	1	54	1	55	1	56	1	57	1	58	1	59	1	60	1
61	1	62	1	63	1	64	1	65	1	66	1	67	1	68	1	69	1	70	1
71	1	62	1	73	1	74	1	75	1	76	1	77	1	78	1	79	1	80	1
81	1	82	1	83	1	84	1	85	1	86	1	87	1	88	1	89	1	90	1
91	1	92	1	93	1	94	1	95	1	96	1	97	1	98	1	99	1	100	1

110. एवं-महासेणकण्हा वि-णवरं-आयंबिलवड्ढमाणं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ, तंजहा-

आयंबिल करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता बे आयंबिलाइं करेइ, करित्ता, चउत्थं करेइ, करित्ता तिण्णि आयंबिलाइं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता चत्तारि आयंबिलाइं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता पंच आयंबिलाइं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता छ आयंबिलाइं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता।

एक्कुत्तरियाए वड्ढीए आयंबिलाइं वड्ढंति चउत्थं-तरियाइं जाव आयंबिलसयं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ।

तए णं सा महासेणकण्हा अज्जा आयंबिलवड्ढमाणं तवोकम्मं चोद्दसहिं वासेहिं तिहि य मासेहिं वीसहि य अहोरत्तेहिं अहासुत्तं जाव

आराहेत्ता जेणेव अज्जचंदणा अज्ज तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता बहूहिं चउत्थं जाव भावेमाणी विहरइ।

महारानी महासेनकृष्णा ने भी काली महारानी के समान प्रव्रज्या स्वीकार की। विशेषता यह थी कि महासेनकृष्णा आर्या आयम्बिल वर्धमान तप:कर्म को स्वीकार करके विचरण करती है, वह इस प्रकार है-

सर्वप्रथम आयम्बिल करती है, करके उपवास करती है, करके दो आयम्बिल करती है, करके उपवास करती है, करके तीन आयम्बिल करती है, करके उपवास करती है, करके चार आयम्बिल करती है, करके उपवास करती है, करके पांच आयम्बिल करती है, करके उपवास करती है, करके छः आयम्बिल करती है, करके उपवास करती है, करके....

इस प्रकार बीच-बीच में उपवास करके आयंबिलों को एक-एक करके बढ़ाती है, यावत् सौ आयम्बिल करती है, करके उपवास करती है।

तब वह महासेनकृष्णा आर्या आयम्बिल वर्धमान तप को चौदह वर्ष तीन महीने और बीस अहोरात्रों में सूत्रानुसार, कल्पानुसार, मार्गानुसार आराधित करती है, आराधित करके जहाँ आर्याचन्दना आर्या थी, वहाँ आती है, आकर वन्दन-नमस्कार करती है, वन्दन नमस्कार करके अनेक उपवास, बेला, तेला आदि तपों से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरण करती है।

111. **तए णं सा महासेणकण्हा अज्जा तेणं ओरालेणं जाव तवेणं तेएणं तव तेयसिरीए अइव-अइव उवसोहेमाणी चिट्ठई।**

तए णं तीसे महासेणकण्हा अज्जाए अण्णया कयाइ पुव्वरतावरत्त काले चिंता जहा खंदयस्स जाव अज्जचंदण अज्जं आपुच्छइ। जाव संलेहणा कालं अणवकंखमाणी विहरइ।

तए णं सा महासेण कण्हा अज्जा अज्जचंदणाए अज्जाए अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जित्ता बहुपडिपुण्णाइं सत्तरस वासाइं परियायं पालइत्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झुसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ णग्गभावे जाव तमट्ठं आराहेइ आराहित्ता चरिमउस्सास-निस्सासेहिं सिद्धा।

संगहणी आहा

अट्ठ य वासा आई, एक्कोत्तरियाए जाव सत्तरस।
एसो खलु परियाओ, सेणिय भज्जाण णायव्वो।

इस समय वह महासेनकृष्णा आर्या इस प्रधान तप से, तेज से तपस्तेज की शोभा से अत्यंत शोभायमान होती है।

तब उस महासेनकृष्णा आर्या को अन्य किसी समय रात्रि के प्रथम व अंतिम प्रहर में स्कन्दक अनगार की तरह इस प्रकार विचार उत्पन्न हुआ कि इस प्रधान उदग्र तप से मेरा शरीर कृश हो गया है यावत् इसमें मांस और रक्त दृष्टिगोचर न होकर चमड़ी के हड्डियों से चिपक जाने के कारण नसों से व्याप्त यह शरीर दिख रहा है। मैं आत्मशक्ति के सहारे ही उठती हूं, खड़ी रहती हूं, व चलती हूँ तथापि अभी मेरे भीतर उत्थान, कर्म, बल, वीर्य व पुरुषकर पराक्रम है। अतः मेरे लिए यह श्रेयस्कर है कि जब तक मेरे भीतर उत्थान, कर्म, बल, वीर्य पुरुषकर पराक्रम है उतने में मैं आर्या चन्दना से अनुमति प्राप्त करके संथारा ग्रहण कर लूं। इस प्रकार का विचार करती है, करके

अगले ही दिन आर्या चन्दना को वन्दन नमस्कार करके उनसे संथारे हेतु अनुज्ञा प्राप्त करती है, यावत् संलेखना संथारा धारण करके मृत्यु की आकांक्षा से रहित होकर विचरण करती है।

वह महासेनकृष्णा आर्या, आर्या चन्दना के समीप सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन करके, लगभग सत्रह वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन करके एक मास की संलेखना से आत्मा को शुद्ध करके, साठ भक्तों का अनशन रूप से छेदन करके जिस प्रयोजन से नग्न भाव, मुंड भाव, केशलोच आदि स्वीकार किया था, उस प्रयोजन की आराधना कर लेती है, करके अंतिम उच्छ्वास निःश्वास में सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हो जाती है।

श्रेणिक की पहली महारानी काली की प्रव्रज्या पर्याय आठ वर्ष थी। क्रमशः सभी रानियों की प्रव्रज्या पर्याय एक-एक वर्ष बढ़ाते हुए दसवीं रानी महासेनकृष्णा की प्रव्रज्या पर्याय सत्रह वर्ष जाननी चाहिए।

।।दसवां अध्ययन सम्पूर्ण।।

निक्षेप : उपसंहार

112. **एवं खलु जंबू! समणेणं भगवया महावीरेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं अयमट्ठे पण्णत्ते!**

अंतगडदसाणं अंगस्स एगो सुयखंधो। अट्ठ वग्गा अट्ठसु चेव दिवसेसु उद्दिस्सिज्जंति। तत्थ पढमविइयवग्गे दस दस उद्देसगा। तइयवग्गे तेरस उद्देसगा। चउत्थ-पंचमवग्गे दस दस उद्देसगा। छट्ठवग्गे सोलस उद्देसगा। सत्तमवग्गे तेरस उद्देसगा। अट्ठमवग्गे दस उद्देसगा।

सेसं जहा णायाधम्मकहाणं।

आर्य सुधर्मा स्वामी जम्बू स्वामी से कहते हैं- जम्बू! सिद्ध गति को प्राप्त कर चुके श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा का यह अर्थ निरूपित किया था।

अन्तगडदशा अंग का एक श्रुतस्कन्ध है, इसमें आठ वर्ग है। आठ दिवसों में इनका उद्देश्य किया जाता है। उसमें पहले और दूसरे वर्ग में दस-दस उद्देशक है। तीसरे वर्ग में तेरह उद्देशक हैं। चौथे और पांचवें वर्ग में दस-दस उद्देशक हैं, छठे वर्ग में सोलह उद्देशक हैं। सातवें वर्ग में तेरह उद्देशक हैं। आठवें वर्ग में दस उद्देशक हैं।

शेष वर्णन श्री ज्ञाताधर्मकथांग सूत्र के अनुसार जान लेना चाहिए।

।। अन्तकृद्दशांग सूत्र सम्पूर्ण।।

णमो सुयदेवयाए ❊ णमो वायणायरियस्स

परिशिष्ट

* अशन- चावल, गेहूँ की रोटी आदि धान्य, दूध, सूरणकन्दादि, अनेक प्रकार के मिष्ठान्न आदि तथा खाखरा वगैरह को अशन कहा जाता है।
* पान- छाछ की आछ, जौ का पानी, सभी प्रकार का पानी, पान शब्द के अंतर्गत लिया जाता है।
* खादिम- खजूर, नारियल, द्राक्षा, ककड़ी, आम, कटहल, सभी प्रकार के फल एवं सूखे मेवे खादिम में लिए गए हैं।
* स्वादिम- दंतौन, पान, तुलसी, हरड, सूंठ, आदि अनेक प्रकार के मुखवास स्वादिम में लिए गए हैं।
* एकासन- दिन में एक बार पुट्ठों को उठाए बिना भोजन करना। इसमें हाथ पैर का आंकुचन प्रसारण किया जा सकता है। किन्तु पुट्ठे अपने स्थान पर टिके रहें। गुरु के आगमन पर खड़े हो सकते हैं।
* आयंबिल- दिन में एक बार चावल, गेहूं, बाजरे, ज्वार, मक्की आदि की रोटी, दलिया आदि को पानी में भिगोकर खाना। इसमें घी, नमक, मिर्च, सौंठ आदि मसालों का प्रयोग वर्जित है। दूध, दही आदि विगय, फल, सूखे मेवे, मुखवास आदि भी इसमें ग्रहण नहीं किए जा सकते हैं। गुरु के आगमन पर खड़े नहीं हो सकते हैं।
* नीवी (निर्विकृतिक) इसमें भी आयंबिल के समान ही आहार ग्रहण किया जाता है परन्तु नमक लिया जा सकता है अन्तर

यह है कि नीवी में छाछ एवं अंगुली आदि से साधारण रूप से चुपड़ी रोटी ले सकते हैं। धारापूर्वक घी डाला हो तो नहीं लिया जा सकता है।

* एकलठाणा- इसमें दिन में एक बार ही आहार पानी साथ में लेना होता है। इसमें पैर फैलाना, सिकोड़ना आदि कार्य नहीं किया जा सकता है।

* नवकारसी, पोरिसी, पुरिमड्ढ (दो पोरिसी) के प्रत्याख्यान चौविहार के ही होते हैं। इनमें तथा उपवास, एकासन आदि में भी पहले वाले दिन सूर्यास्त के बाद से ही आहार पानी का त्याग कर देना श्रेष्ठ है। अन्यथा अर्धरात्रि (लगभग 12 बजे के बाद) कुछ भी खाना-पीना नहीं होना चाहिए। रात्रि बारह बजे के बाद कुछ खा पी लेने पर नवकारसी, पोरिसी, उपवास आदि के प्रत्याख्यान नहीं हो सकते हैं।

* * *